CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नृतत्व विभाग प्रकोष्ठ

भारतीय संग्रहालय

कलकत्ता

संक्षिप्त मार्ग-दर्शिका

069
न म

State Library, Lko.

१९६२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नृतत्व विभाग प्रकोष्ठ

भारतीय संग्रहालय

कलकत्ता

संक्षिप्त मार्ग-दर्शिका

नृतत्व विभाग भारत सरकार के पदाधिकारियों द्वारा रचित

१९६२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

069
न म

अनुवाद—माधुरी निगम

श्री सरस्वती प्रेस लिः ३२, आचार्य प्रफुल्लचन्द्र रोड द्वारा मुद्रित, कलकत्ता-९

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय सूची

		पृष्ठ
१.	निकोबारी	५
२.	सिआंग सीमान्त विभाग के अदि	११
३.	अंगामी नागा	१९
४.	खासी	२४
५.	लिटिल अण्डमान के 'ओन्गे'	२९
६.	चेन्चू	३६
७.	कणिक्कर	४२
८.	उराली	४६

State Museum, Library, Lko.
3605
24 8 60

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समय अनुक्रमणिका

वृहस्पतिवार—दोपहर १२ बजे से संध्या ४.३० तक—शीतकाल में
—दोपहर १२ बजे से संध्या ५ बजे तक—अन्य ऋतुओं में
सप्ताह के अन्य दिनों में—
प्रातः १० बजे से संध्या ४.३० बजे तक—शीतकाल में
प्रातः १० बजे से संध्या ५ बजे तक—अन्य ऋतुओं में
प्रवेश शुल्क—केवल शुक्रवार को—२५ नए पैसे

बोर्ड ऑफ ट्रस्टी की ओर से अवैतनिक मन्त्री डॉ० नीहार रंजन राय
द्वारा प्रकाशित।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलों का संकलन कर लौटता हुआ निकोबारी परिवार।

निकोबार द्वीप समूह।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निकोबारी

निकोबार द्वीपसमूह के अंतर्गत छोटे बड़े २० द्वीप सम्मिलित हैं। इनका क्षेत्रफल ६०३५ वर्गमील है। यह द्वीपमाला समुद्र में १६३ मील तक फैली हुई है। इनमें से सुदूर उत्तरी सीमा पर स्थित कारनिकोबार द्वीप है जो पोर्टब्लेयर से लगभग १५० मील के अंतर पर स्थित है।

इन द्वीपों में जनसंख्या समान रूप से विस्तृत नहीं। पिछली जनगणना के अनुसार इनकी संख्या १२,०२२ है। संपूर्ण द्वीपमाला में संस्कृति का प्राय: एक ही स्वरूप मिलता है। प्रस्तुत विवरण कारनिकोबार पर आधारित है जहाँ की जनसंख्या ८,३७४ है।

कारनिकोबार १४ ग्रामों अर्थात् 'पनाम' में विभाजित है। प्रत्येक ग्राम की सीमा वृक्षावलियों से अंकित है। ये वृक्षावलियाँ या तो प्राकृतिक रूप में जन्मे विशाल वृक्षों की हैं अथवा इन्हें एक कतार में रोपा गया है। प्रत्येक वर्ष ग्रामवासी इन वृक्षों का परीक्षण करते रहते हैं—ताकि कहीं से अनाधिकार प्रवेश संभव न हो पाये। यहाँ भूमि पर किसी का व्यक्तिगत स्वत्व नहीं होता। संपूर्ण भूमि विभिन्न 'किनेम' अर्थात् वंशवर्गों के अधिकार में रहती है।

इस प्रकार ग्रामों की सीमा कहीं भी स्पष्ट रूप में विभाजित नहीं—किन्तु अंतर्राष्ट्रीय सीमाऐं यथाक्रम बटी हुई हैं।

ग्राम की पार्श्व सीमाऐं द्वीप के केन्द्रीय स्थल की ओर खचित रहती हैं, जिससे प्रत्येक की अधिकांश चौड़ान सामुद्रिक तट पर हो। इस प्रकार कार-निकोबार में ग्राम सीमा का रूप निम्नांकित चित्र की भाँति रहता है।

द्वीप का केन्द्रस्थल

तवात्

तूलौंग

तूहेत

एलपनाम

ग्राम का यह उपरोक्त विभाजन केवल सीमागत् नहीं, अपितु ग्राम अर्थ, ग्राम संगठन, रीति रिवाज़ आदि की दृष्टि से भी ग्राम के संपूर्ण जीवन में इसका विशेष प्रयोजन रहता है। प्रत्येक ग्राम में एक प्रमुख स्थान 'एलपनाम' होता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, जहाँ पर ग्राम का सभाकक्ष, समाधिस्थल और जन्मगृह होते हैं। एलपनाम के पश्चात् निवास स्थल अर्थात् 'तूहेत' होते हैं। कहीं कहीं निवास स्थल नारियल के वृक्षों के मध्य बिखरे रहते हैं--कारण अधिकांश ग्रामों में ताड़वृक्ष (Coco-Palms) 'तूहेत' क्षेत्र तक विस्तृत रहते हैं। इस भाग में विशेषकर नारियल, पुंगीफल (सुपारी), जटामूलकेतकी और घास के मैदान होते हैं। तूलौंग से तवात् की ओर अग्रसर होने पर नारियल के पेड़ कम दिखाई पड़ते हैं--अर्थात् वनप्रान्त आरंभ हो जाता है। यहाँ पर कन्द, कचु, केला, जटामूलकेतकी (Pandanus), पपीता, बैंगन, मिर्च, निंबूफल और गन्ने के वाग लगाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त तवात् में ईंधन के लिए बाँस और बेंत के भी वन लगाए जाते हैं। इन पेड़ों की रक्षा का विशेष ध्यान रखा जाता है। इन्हें कुछ विशेष प्रयोजन जैसे मकान बनाने अथवा मछली पकड़ने की खात् नौकाएँ इत्यादि बनाने के लिए ही काटा जाता है।

प्रत्येक परिवार के पास तूहेत क्षेत्र के विशेष निवास के अतिरिक्त एक या दो और भी घर तूलौंग अथवा तवात् में होते हैं जहाँ पर घर के कुछ सदस्य सदैव अथवा कभी कभी जाकर रहते हैं। वे यहाँ शूकरों, बगानों तथा उपवनों की देखभाल करते हैं।

चूंकि प्रत्येक ग्राम का अपना पृथक प्रादेशिक अस्तित्व होता है—अतः वहाँ पर होने वाली प्रक्रियाएँ, बाहर वालों के साथ व्यवहार का रुख, अंतर्ग्राम संबंध इत्यादि ग्रामसभा के द्वारा ही नियोजित होते हैं। इस सभा का एक कप्तान (प्रधान) और दो सहायक कप्तान (प्रधान) होते हैं। कप्तान शब्द का प्रयोग संभवतः यूरोप के प्राचीन व्यापारी ग्राम प्रमुख के लिए किया करते थे और तभी से यह शब्द यहाँ प्रचलित है। आज के प्रशाशन विभाग ने इस शब्द को मान्यता दी है और सरकारी कार्यों में प्रथम कप्तान ग्राम प्रमुख कहलाता है। वही ग्राम की मुख्य सत्ता माना जाता है। ग्रामवासी इस शब्द के वास्तविक महत्व को समझते हैं। कप्तान को उनकी अपनी भाषा में 'मा-पनाम' अर्थात् ग्राम का प्रमुख कहते हैं।

अधिकारी रूप में कप्तान का प्रमुख कार्य सरकार के साथ अपने ग्राम का संपर्क रखना, सरकार के आज्ञाप्रपत्रों को अपने ग्राम में लागू करना तथा चोरी, हत्या एवं बलात्कार इत्यादि अभियोगों की रिपोर्ट करना है। दूसरे दो कप्तान जिन्हें द्वितीय और तृतीय कप्तान कहते हैं—इन कार्यों में प्रमुख कप्तान की सहायता करते हैं।

छोटे मोटे अपराध जैसे कृषि और बागवानी से संबंधित नियमों का उल्लंघन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा यौन दुर्व्यवहार इत्यादि के फैसले ग्रामसभा करती है। ग्राम के आंतरीय मामलों में ग्रामसभा ही पूर्ण सत्ता है जो समाज की प्रक्रियाओं का संचालन करती है। ग्रामसभा में कप्तान और प्रत्येक वंशवर्ग का स्वामी उसका सदस्य होता है।

ग्रामसभा के सदस्य प्रायः संध्यासमय मा-पनाम के घर पर विचार विमर्श करते हैं। यहां पर ग्राम के मामलों के अतिरिक्त द्वीपसमूह की विशेष घटनाओं जैसे जलयानों के आवागमन, नवागत् व्यक्तियों इत्यादि के संबंध में भी चर्चाऐं होती हैं।

यहाँ पर साधारण कुटुम्ब में पति पत्नी और उनके बच्चे सम्मिलित रहते हैं। पर प्रत्येक कुटुम्ब का अस्तित्व 'किनेम' में निलय रहता है। 'किनेम' से बाहर विवाहित स्त्री पुरुषों और बच्चों को कोई मान्यता नहीं दी जाती। पति व पत्नी के लिए आवश्यक है कि वे किसी किनेम अथवा अन्य किसी सहाय समुदाय के सदस्य बनें।

इस प्रकार किनेम एक प्राथमिक सामाजिक वर्ग होता है। प्रत्येक किनेम का आधार कुछ सजातीय व्यक्तिगत कुटम्ब होते हैं। इनमें सामान्य आर्थिक संबंध भी होता है—अर्थात् इनके नारियल के बगान, उपवन प्रान्त और आवास बहुधा सार्वजनिक होते हैं।

एक बड़े किनेम को कुछ उपकुटुम्बों में नारियल के बगानों के आधार पर विभाजित किया जा सकता है। यद्यपि अधिकांश आर्थिक क्रियाऐं जैसे मौसमी बागवानी इत्यादि संयुक्त परिवार द्वारा ही आयोजित होती हैं।

वंशानुक्रम के अनुसार संयुक्त परिवार को विस्तृत परिवार कहा जा सकता है, जहाँ बच्चों ने विवाह के उपरान्त निवास परिवर्तन न किया हो।

इस प्रकार कारनिकोबार में प्राप्त परिवार एक ही वंश के आपस में संबंधित व्यक्तियों का समूह होता है, जहाँ उनके पति पत्नी और बच्चे सब एक साथ एक ही निवासस्थल में रहते हैं। इस संपूर्ण निवास का स्वामी (कर्त्ता धर्ता) एक अकेला व्यक्ति होता है—जिसकी सत्ता का निर्धारण उसके जन्म, अनुभव, और आयु पर निर्भर होता है। वही संपूर्ण समूह का नेता माना जाता है। प्रत्येक उपपरिवार का भी अपना कर्त्ता अर्थात् स्वामी होता है किन्तु वह अपनी सत्ता का प्रयोग संपूर्ण समूह के कर्त्ताओं के सहयोग से करता है। यही वृहद समूह 'किनेम' कहलाता है।

संयुक्त परिवार में भूमि अन्यक्रामण का अधिकार अन्य उत्तराधिकारों के साथ ही नहीं मिल जाता। संयुक्त परिवार के किसी भी सदस्य को परिवार की भूमि पर पृथक अधिकार नहीं होता। वह उनकी निजी संपदा नहीं हो सकती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रत्येक किनेम के नाम ग्राम भूमि का एक निश्चित भाग रहता है चाहे वह नारियल के बगान हों, अथवा अन्य वन उपवन या जंगलात। इस प्रकार संपूर्ण द्वीप किनेमों में बंटा हुआ है, अर्थात्—'किनेम' भूमि पर अधिकार रखने वाली पूर्ण एकाई है।

जब किसी किनेम को कृषि के लिए कुछ अतिरिक्त भूमि की आवश्यकता होती है तो उस परिवार का स्वामी ग्राम के उन कर्त्ताओं के पास जाता है जिनके पास कुछ अधिक भूमि होती है। उनकी इस आवश्यकता की पूर्ति की जाती है। जब तक दूसरे किनेम को भूमि की आवश्यकता न हो, इन्हें वह भूमि कृषि-कर्म के लिए दे दी जाती है। जब उन्हें स्वयं उस भूमि की आवश्यकता पड़ती है तो वह उन्हें वापिस मिल जाती है। इस प्रकार सामयिक भूमि-फलोपभोग की नीति विभिन्न किनेमों में और पूर्ण सहयोग से रहने वाले ग्रामों में पारस्परिक आर्थिक सामाजिक संबंध स्थायी रखती है।

यद्यपि भूमि किसी विशेष व्यक्ति के नाम नहीं होती तथापि परिवार का कर्त्ता भूमि-फलोपभोग की नीति का अपने अधिकार के अंतर्गत संचालन करता है। यह प्रत्येक परिवार के स्वामी का दायित्व होता है कि वह परिवार की भूमि से पूरा पूरा लाभ उठाए।

पूर्वकाल में व्यक्ति की निजी संपत्ति जैसे चम्मच, काँटा, वर्तन इत्यादि उसकी अंत्येष्टि के समय विनष्ट कर दी जाती थी। किन्तु ईसाई धर्म के प्रचार से अब शवगृह की रीति में परिवर्तन हो गए हैं—और अब इस प्रकार की व्यक्तिगत संपत्ति का विनाश नहीं किया जाता।

कारनिकोबार में संबंध भावना के सिद्धान्त वर्गीकृत हैं। यहाँ की भाषा में अनेकों प्रकार के रक्त संबंधियों तथा ससुराली संबंधियों के एक ही शब्द मिलते हैं। इनकी प्रमुख विशेषता यही है कि यहाँ पर संबंधियों का वर्गीकरण पीढ़ीगत् होता है। Ego अर्थात 'व्यक्ति' से पूर्व की पीढ़ी—पितृ पीढ़ीवर्ग में, पितामह की पीढ़ी के दूसरे वर्ग में और इस प्रकार प्रत्येक पीढ़ी पृथक रूप में विभाजित रहती हैं।

यह वर्गीकरण नीचे लिखे के अनुसार होता है—

मूवोहोंन्ग
कलवी
योंन्ग
कूंन

सब लड़के लड़कियाँ अपने माता पिता वर्ग के लिए 'कूंन' कहलाते हैं और माता-पिता वर्ग के सभी व्यक्ति बच्चों के लिए योंन्ग होते हैं। इनमें से सभी पुरुष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

योंन्ग को 'योंन्ग किकोंयों' तथा स्त्रियों को 'योंन्ग किकानो' कहते हैं। इसी प्रकार पहिले की पीढ़ियों के शब्दों में भी प्रत्यय जोड़कर उनमें यौन अंतर दिखाया जाता है। यूं पुकारने में अपने निजी पिता को 'माम' और मां को 'पोपो' कहते हैं। ससुराली संबंधियों जैसे मां के भाई, पिता की बहिन, पिता की बहिन का पति इन सबको योंन्ग कहा जाता है।

पुत्र प्रपीढ़ी में बड़े भाई के लिए 'मेम' तथा छोटे भाई बहिनों के लिए 'काहेम' शब्द होता है। विस्तृत परिवार के वृत के बाहर छोटे बड़े संबंधियों की पहिचान के लिए विभिन्न शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इनमें अवस्था में बड़े अपने छोटों को 'मनान्गो' तथा छोटे अपने से बड़ों को 'मरोइन्यो' कहते हैं। Cross Cousins अर्थात् ममेरे फुफेरे भाई बहिनों के लिए कोई अलग शब्द नहीं हैं।

समाज में विवाह किनेम के आधार पर होते हैं। किनेम एक बहिर्विवाही विभाजन है। किनेम के प्रत्येक सदस्य के लिए आवश्यक है कि वह अपने समूह से बाहर विवाह करे। यहाँ भाई बहिनों की संतान में आपस में विवाह का प्रचलन नहीं। कारण बहुधा सभी भाई और बहिनें एक ही समूह अर्थात् किनेम में रहते हैं। अतएव भाई बहिनों के बच्चों का संबंध आपस में 'कूंन' का होगा और 'कूंन' आपस में विवाह नहीं कर सकते, यह सर्वथा निषिद्ध होता है। यहां तक कि भाई-बहिन के बच्चे विवाहोपरान्त विभिन्न स्थानों में रहने पर भी सगी (First cousin) ममेरी, फुफेरी, चचेरी और मौसेरी संतान के साथ आपस में विवाह नहीं कर सकते। हाँ इनमें विवाह केवल उस स्थिति में संभव है जब कि वे दूसरे ग्रामों में रहते हों और भिन्न किनेम के सदस्य हों। किन्तु ऐसे विवाहों में भी ग्रामपंचायत का समर्थन आवश्यक है। वास्तव में हर विवाह में ग्रामपंचायत का समर्थन आवश्यक होता है।

विवाह के उपरान्त आर्थिक दृष्टिकोण से निवास स्थान निश्चय किया जाता है। यदि परिवार के पास आवश्यकता से अधिक कुछ भूमि और बगान इत्यादि हैं तो वह नए विवाहितों को अपने पास ही संयुक्त परिवार में रखने की चेष्टा करता है ताकि उनके सहयोग से अधिक उपादानों और परिवार के सामान्य आर्थिक साधनों की वृद्धि हो और उससे संपूर्ण परिवार की भौतिक स्थिति संभल जाय। इस प्रकार परिवार का संसाधनीय कर्त्ता अपने संबंधियों और मित्रों को मुक्तहस्त भोज और भेंट आदि से अनुगृहीत कर ग्राम में अपना सामाजिक स्तर बनाने और अपना प्रभाव स्थापित करने का प्रयास करता है।

जब कोई विवाहित अपना पूर्व स्थान छोड़ कर दूसरे परिवार का सदस्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन जाता है तो उसका पूर्व परिवार के आर्थिक उपकरणों में कोई हक नहीं रहता। उसे उनका परित्याग करना पड़ता है।

किन्तु ईसाई मत के क्रमिक प्रसार के कारण मौलिक धार्मिक आचार विचारों में परिवर्तन हो गए हैं। उनका अब वैसा प्रवैगिक् प्रभाव नहीं रहा। संपूर्ण द्वीपसमूह में ग्रामवासियों द्वारा बनाए गए ९ गिरजे हैं।

एक ही परिवार और किनेम में कुछ ईसाई और अईसाई धर्म के मानने वाले एक साथ रहते हैं। अवशेष १५०० जो ईसाई नहीं हैं--विभिन्न परिवारों और किनेम में बिखरे हुए हैं, इनका कोई विशेष धार्मिक वर्ग नहीं है। जो ईसाई धर्म नहीं मानते उन्हें भी गिरजे जाने और प्रार्थना में भाग लेने की अनुमति रहती है।

वृद्ध जन अभी भी पुरातन धार्मिक आचारों का पालन करते हैं किन्तु ये धार्मिक अनुष्ठान भी सभी ग्रामों में एक से नहीं मिलते।

मौलिक धार्मिक विचारों के अनुसार भूतप्रेतों को 'सिआ' कहते हैं। ये ही संपूर्ण व्याधियों की मूल हैं। ये प्रेतात्माएं रक्त की प्यासी होती हैं, और जब भी कोई अवसर पाती है—स्त्री पुरुषों तथा बच्चों पर झपटती हैं। केवल इन्द्रजाल वेक्ता (जादूगर) जिन्हें 'तुमिलुआनो' कहते हैं—इन भूत प्रेतों के साथ संपर्क रख सकते हैं। ये प्रेत किसी भी स्थान पर जा सकते हैं। परन्तु अधिकतर उनके निवास निर्जन जंगली स्थानों में होते हैं जिनका पता केवल 'तुमिलुआनो' लगा सकते हैं।

तुमिलुआनो शारीरिक व्याधियों को दूर करने की भी कला जानते हैं। पहिले इनमें आपस में कुछ गुटबन्दी थी। इनमें से जिन्हें इस काम के लिए चुना जाता था उन्हें 'अ-फाई' कहते थे, किन्तु ईसाई धर्म के संपर्क में आने से इनकी यह गुटबन्दी भी समाप्त हो गई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिआँग सीमान्त विभाग के अदि

(उ. पू. सी. प्र.)

उत्तरी पूर्वी सीमान्त प्रदेश के सिआँग सीमान्त विभाग में सुबंसरी तथा दिबाँग नदियों के मध्य की पर्वतीय भूमि में अदियों का देश विस्तृत है। ये तिब्बती बर्मी भाषा भाषी कुछ वर्षों पूर्व तक अबोर कहलाते थे। इनकी जनसंख्या लगभग ६८,००० है। इनमें कितने ही अंर्तविवाहशील समूह जैसे पदम, मियोन्ग, पासी, पान्गी, कारको, मिलान्ग, सेमान्ग, बोमो, जान्बो इत्यादि सम्मिलित हैं। इनमें से प्रत्येक के पृथक निवास स्थान हैं।

अदि मंगोलीय वर्ग के हैं। इनका कद छोटा और शरीर की बनावट पुष्ट, बाल काले सटकारे, आँखें तिरछी और गण्डचाप उभरे हुए होते हैं।

अदि अपने स्थायी ग्राम बना कर रहते हैं। बहुधा ये अपने गाँव पर्वत-खण्डों के ऊपर जलस्रोतों के समीप बनाते हैं—ताकि उन्हें जल का अभाव न हो, स्थान स्वास्थ्यवर्धक हो तथा जहाँ से वे अपनी शत्रुओं से रक्षा कर सकें। वे अपने गाँव में जल समीप के स्रोत से बाँसों की नलिकाओं को आपस में जोड़ कर लम्बा नल बनाकर उसी के द्वारा लाते हैं।

अदि ग्राम में इनके निवास एक दूसरे के समीप समूह रूप में होते हैं। इन्हें ये बाँसों के मंच के ऊपर बनाते हैं। इनके घर का रुख बहुधा पूर्व अथवा पश्चिम की ओर होता है और घरों के चारो ओर पतली सकरी गलियाँ ही गाँव की परिसीमा खचित करती हैं। गाँव के मध्य प्रमुख स्थान में 'मोशुप' अथवा युवाशयनगृह बनाए जाते हैं—ताकि आग लगने अथवा अन्य किसी आपत्ति के अवसर पर संपूर्ण ग्राम की निगरानी की जा सके। लड़कियों के शयनगृह जिन्हें 'रशेन्ग' कहते हैं—ग्राम के मध्य ही किसी ऊंची पहाड़ी पर बनाए जाते हैं। ग्राम के कोठार अर्थात् धान्यागृह घरों से कुछ दूरी पर छोटे छोटे चबूतरों की भाँति बने होते हैं। इन्हें आग से बचाने के लिए ही घर से दूर बनाया जाता है।

अदि ग्राम के मुख्य द्वार पर रक्षार्थ बाँस के फाटक होते हैं, जिन्हें संक्रामक रोगों के फैलने के समय बन्द कर दिया जाता है और कोई बाहिरी व्यक्ति गाँव में प्रवेश नहीं कर पाता। कुछ ग्रामों में किसी अपरिचित के ग्राम में प्रवेश करने के पूर्व कुत्ते की बलि चढ़ा कर उन्हें फाटक के सामने टाँग दिया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अदियों के निवास बहुधा ४० फुट लम्बे और २० फुट चौड़े होते हैं। इन्हें चार-पाँच फुट ऊँचे बाँस व लकड़ी के मंच के ऊपर बनाया जाता है। मकान का फर्श विपटित अर्थात् फाड़े हुए बाँस से बनाए जाते हैं और दीवालें लकड़ी के तख्तों को दाव (Dao) से काट कर सटा सटा कर बनाई जाती हैं। घर का छप्पर जो लगभग तीन-चार फुट बाहर की ओर निकला हुआ होता है, उसे बेंत अथवा ताड़ वृक्ष के पत्तों से छाया जाता है। कुछ ग्रामों में जंगली केले के सूखे खम्भ अथवा पत्तों से भी छप्पर छाते हैं। हर एक घर के सामने खुला मंच रहता है, उसके बाद ढका हुआ बरामदा होता है। इस ढके हुए बरामदे के पीछे रहने का केवल एक कमरा होता है जिसके मध्य आग जलाने का स्थान होता है। यह स्थान भोजन पकाने और कुटीर में आलोक फैलाने के लिए होता है। इसी के चारो ओर पारिवारिक जीवन के समस्त कार्य कलाप होते हैं। प्रत्येक घर के पिछवाड़े सुअरों के रहने का स्थान रहता है—यही इनका शौचालय भी होता है। घर में प्रवेश करने के लिए काठ की छोटी सी सीढ़ी होती है। यह वास्तव में लठ्ठों को काट कर बनाई जाती है।

यहाँ पर युवा पुरुषों के शयनगृह 'मोसुप' कहलाते हैं। यह भी इसी प्रकार बाँसों और लठ्ठों के मंच के ऊपर निर्मित विशाल कक्ष होता है। इन शयनगृहों का कार्य केवल ग्राम की रक्षा करना ही नहीं, यह इनकी पंचायत अर्थात् 'केवाँग' की बैठकों का भी स्थान होता है। यहाँ पर जातीय सहभोज और धार्मिक अनुष्ठान इत्यादि भी संपन्न किए जाते हैं। यह अतिथिशाला का भी काम देता है। मोसुप का निर्माण बाँस ,लकड़ी, बेंत, बेंत की पत्तियों आदि वस्तुओं से किया जाता है। घरों की भाँति ही मोसुप की दीवालें भी लकड़ी के तख्तों को जोड़ कर बनाई जाती हैं और प्रवेश द्वार लठ्ठों को काट कर सीढ़ी रूप में बनाया जाता है। मोसुप के अन्दर बहुत से अग्निस्थल अर्थात 'मेरोम' होते हैं। प्रत्येक अग्निस्थल के निर्माण के साथ ही कुछ नए सदस्यों की भर्ती की जाती है। वे इसके चारो ओर ५-६ वर्षों तक सोते हैं। केवल विवाह के उपरान्त ही ये 'मोसुप' में रहना छोड़ते हैं। फिर या तो ये अपने घर में रहते हैं, अथवा अपनी पत्नी के यहाँ जाकर रहने लगते हैं। किन्तु जीवन पर्यन्त वे अपने मेरोम के सदस्य रहते हैं। युद्ध के विजयोपहार इत्यादि यहीं मोसुप की दीवालों पर टंगे रहते हैं।

कन्याओं के शयनगृह अर्थात 'रसेन्ग' ग्राम के मध्य किसी निर्जन स्थान पर होते हैं। यह भी बाँसों के मंच पर बनाया गया छोटा सा कक्ष होता है। इसकी दीवालें मज़बूत बाँसों से बनाई जाती हैं—केवल एक ओर द्वार के लिए खुला स्थान होता है। इस कक्ष की लम्बाई २० फुट और चौड़ाई १५ फुट के लगभग

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होती है। यहाँ पर कक्ष के मध्य एक 'मेरोम' अर्थात् अग्निस्थल होता है, इसी के चारो ओर लड़कियाँ अपने विवाह काल तक सोती हैं।

अदि पुल निर्माण में अत्यंत निपुण होते हैं। इनके बनाए हुए वृत्ताकार अर्थात् नलाकार पुल अत्यंत ही प्रशंसनीय होते हैं। यहाँ पर दिहाँग तथा अन्य चौड़ी नदियों पर इन्होंने बेतों के द्वारा बड़े ही कलात्मक पुलों का निर्माण किया है।

अदियों की वेशभूषा अत्यंत ही साधारण होती है। पुरुष छोटा कटिवस्त्र और आस्तीन रहित सलूका पहिनते हैं। सिर पर ये धूप और वर्षा से अपनी रक्षा करने के लिए बेंत के महीन तारों से बुनी हुई टोपी का प्रयोग करते हैं। दाव इनकी वेश भूषा का प्रमुख अंग है। यह इनकी कमर के ऊपर सूत अथवा बन्दर की खाल की बनी म्यान में झूलती रहती है।

स्त्रियाँ सूती अधच्छद पहिनती हैं। इस पर लाल नीली व पीली धारियाँ बनी रहती हैं। यह घुटनों तक लम्बा होता है। यद्यपि ये आस्तीनहीन ब्लाउज या जाकेट भी पहिनती हैं, पर कभी कभी वक्ष पर श्वेत चादर ओढ़े रहती हैं।

इनके आभूषण—गले का हार, कान के कर्णफूल, धातु के कंकण इत्यादि होते हैं। कंकण स्त्री व पुरुष दोनों ही पहिनते हैं। गले के हार को 'तद्दक' कहते हैं। ये नीले, श्वेत, और पीले मणि-मोतियों के होते हैं। इन्हें ये या तो तिब्बत से मंगाते हैं, या बाज़ार से खरीदते हैं।

कंकण बहुधा पीतल के होते हैं। इन्हें यहाँ के स्थानीय सुनार बनाते हैं। इन पर बहुत प्रकार के नमूने चित्रित रहते हैं। कर्णफूल अधिकतर चाँदी या राँगे के होते हैं। डामरो की कुछ पद्म कन्याऐं कानों में भारी छल्लेदार बाले पहिनती हैं जिससे उनकी कर्ण तुंगिका खिंच कर लम्बी हो जाती है।

इनका एक अन्य स्थानीय आभूषण 'बयोप' होता है। इसे अदि कुमारिकाऐं प्रथम संतान के जन्म काल तक पहिनती हैं। यह कमर पर पहिनने की करधनी होती है जिसमें पीतल की तीन इंच व्यास की छोटी छोटी तश्तरियाँ एक रस्सी के सहारे झूलती हैं। बहुधा ये तश्तरियाँ भिन्न आकार की छोटी बड़ी होती हैं। बयोप कमर के चारों ओर पहिना जाता है। कभी कभी कटिवस्त्र के नीचे भी वे इसे पहिनती हैं। गति संचालन के समय इससे रुनझुन रुनझुन का मधुर शब्द झंकृत होता रहता है। वे कमर के चारों ओर बेंत की बड़ी सुन्दरता से बनी हुई पेटियाँ भी पहिनती हैं।

यहाँ पर गुदने गुदाने की प्रथा प्रचलित है। कुछ स्त्रियाँ पैरों के टखने और निचले हिस्से पर लम्बे गुदने गुदवाती हैं। इनमें अधिकतर गुणक चिन्हों (×) की चित्रावली अंकित रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्त्री व पुरुष दोनों ही सर के चारों ग्रोर गोलाकार रूप में छोटे केश रखते हैं। वे दाव के ऊपर धार पर बाल रख कर उन्हें लकड़ी के सहारे पटक कर काटते हैं।

ग्रदि का प्रमुख खाद्य चावल है। उत्तर में ऊंचाई के ग्रामों में दूसरा ग्रनाज ग्रनयात् भी उनके भोजन का प्रमुख भाग रहता है। ये शेर के ग्रतिरिक्त ग्रन्य सभी पशुग्रों का मांस खाते हैं। मछली इन्हें ग्रत्यंत ही प्रिय होती हैं। ये लोग विशाल शन्क्वाकार बाँस के जाल द्वारा मछली पकड़ते हैं। इन्हें ये नदी की धारा के विपरीत प्रवाह की ग्रोर रख कर मछलियाँ फँसाते हैं। कभी-कभी ये जंगल के विषाक्त फलों ग्रौर जड़ी बूटियों से जल विषैला कर मछली मार कर भी पकड़ते हैं।

ग्राखेट यहाँ के पुरुषों के लिए ग्रत्यंत ही ग्रावश्यक ग्रौर समय बिताने का प्रिय साधन है। ये गिलहरी, जंगली चूहे, जंगली पक्षी तथा ग्रन्य प्रकार की चिड़ियों को बाँस से निर्मित धन्वाकार जाल के सहारे पकड़ते हैं। इन्हें 'एटकू' कहते हैं। कुछ बड़े पशुग्रों को पकड़ने के लिए भयानक मृत्युनिपात जाल का प्रयोग किया जाता है। इसे बाँस से निर्मित खाँचे के ऊपर भारी पत्थर लगा कर बोझिल बनाते हैं। ग्राखेट के समय कुछ मनुष्य ग्रौर कुत्ते हिरणों को शब्द कर हड़काते हैं ग्रौर फिर दूसरे लोग जो थोड़े ग्रन्तर पर खड़े होते हैं, उन्हें धनुष तथा विष बुझे बाणों से मारते हैं।

इनके घर के प्रयोग की वस्तुएं बहुधा देशज ग्रर्थात् वहीं पर बनाई गई होती हैं। बाँस तथा तुम्बी से बने हुए बर्तन बहुतायत में प्रयुक्त होते हैं। इनका सबसे बड़ा उद्योग करण्डकार्य ग्रर्थात् बेंत का है। इनसे ये शिर की टोपियाँ ग्रौर टोकरियाँ बनाते हैं। ग्रादमियों के पहिनावे में सबसे ग्रधिक ग्रभिद्रश्य वस्तु उनकी टोपी ग्रर्थात् शिरस्त्राण है। इसे केवल पुरुष ही पहिनते हैं। इसका ग्राकार ग्रंग्रेज़ी टोपी के समान होता है। यह खूब बारीक बेंत के तारों से बनाई जाती है। बहुत से गोलाकार बेंत एक साथ सहेज कर रखे जाते हैं ग्रौर उन्हें ग्रन्य महीन बेंत के धागों से बींधा जाता है। इन्हें ऐसे सुन्दर ग्रौर कलात्मक ढंग से बनाते हैं कि टोपी के ऊपर सुन्दर धारियाँ एक दूसरे के समानान्तर सीधी सीधी खचित हो जाती है। इन्हें इतने घने रूप में एक दूसरे से सटा कर बनाते हैं कि टोपी पूरी तरह से पानी व तलवार से उनकी रक्षा करती है। शिरस्त्राण में चारो ग्रोर बाट नहीं होती पर इसे बाहर की ग्रोर से दृढ़ ग्रौर मजबूत बनाने के लिए इसके ऊपर कुछ मोटे बेंत के टुकड़े बाहर की ग्रोर उभरे हुए लगाए जाते हैं—ताकि वे शत्रु की तलवार का सामना कर सकें। कुछ शिरस्त्राणों को हॉर्नबिल पक्षी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

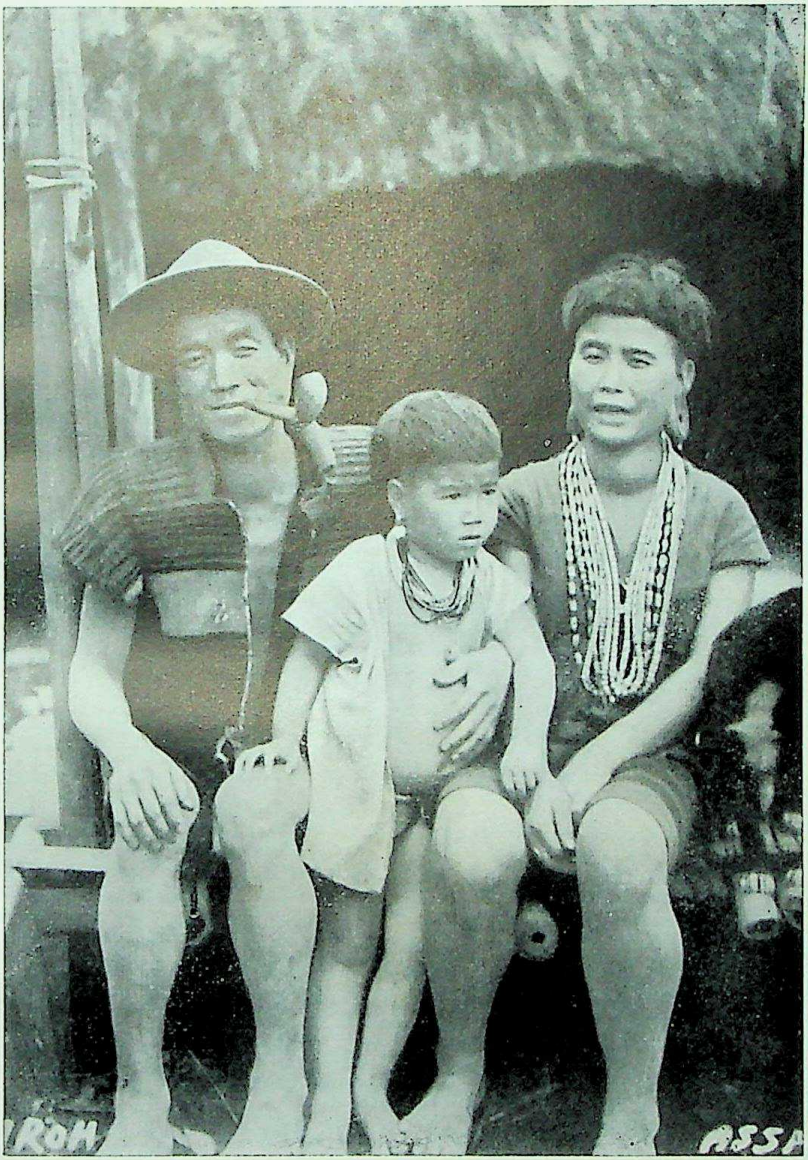

सिग्राँग सीमान्त विभाग का एक अदि परिवार।

(उ. पू. सी. इ.)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

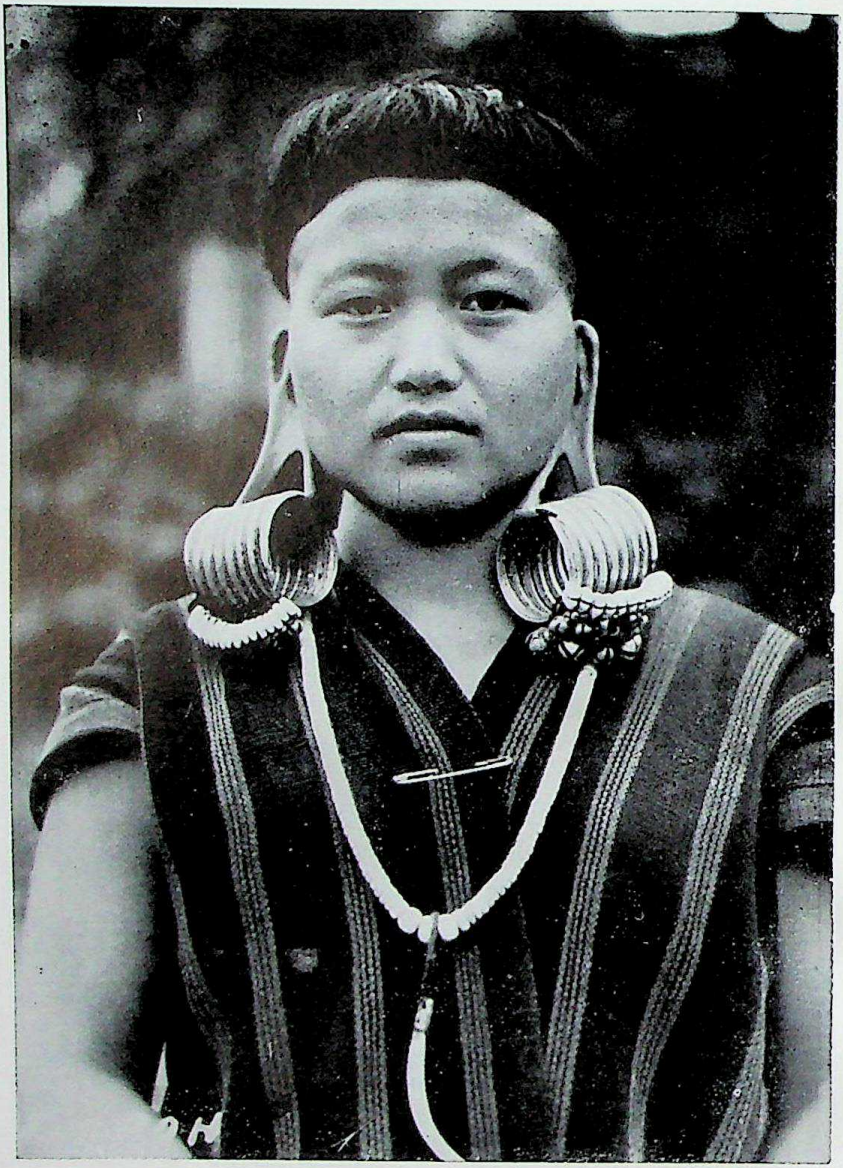

बोझिल कर्णफूलों से आभूषित अदि बाला।

सिआँग सीमान्त विभाग, (उ. पू. सी. इ)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

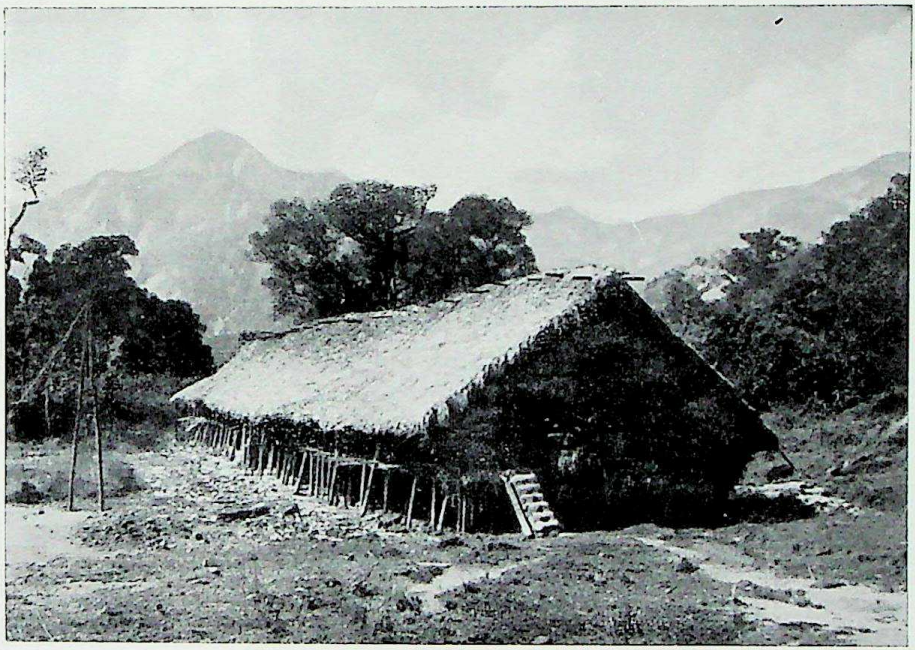

मोसुप--आदि कुमारों के शयन गृह।

सिआँग सीमान्त विभाग, (उ. पू. सी. इ)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के शिर, सुअर के दांत तथा भालू की खाल से सजाते हैं। यहाँ के पुरुष घर के नाना कार्यों के हेतु विभिन्न आकार की टोकनियाँ बनाते हैं। कुछ ग्रामों में अदि खाना बनाने के मिट्टी के पात्र बनाते हैं। किन्तु मैदानी भाग के बाजारों से पीतल या अन्य धातुओं के बर्तन खरीदने के उपरान्त यह उद्योग यहाँ प्रायः समाप्त हो गया है।

अदि कन्याऐं बड़ी निपुण बुनकर होती हैं। वे अपने रंगबिरंगी घाघरे जिन्हें 'गाले' कहते हैं—स्वयं ही बुनती हैं। इनमें ये अनेकों रैखकीय नमूने बनाती हैं। इन्हें ये अपने साधारण कर्घे पर ही बनाती हैं। ये रूई से सूती नमदे भी बनाती हैं जिन्हें 'गाडू' कहते हैं। रूई या कपास ये अपने खेतों में ही उपजाते हैं। अपने प्रयोग से अतिरिक्त गाडू ये मैदान के बाजारों में १० से लेकर २० रुपये तक कीमत पर बेच देते हैं।

अदि आज भी अग्नि प्रज्वलन के लिए लोहा और अनलाश्म का प्रयोग करते हैं।

इनका प्रमुख आर्थिक आधार कृषि और पशुपालन है। ये मिथान (एक प्रकार का भैंसा), सुअर, कुत्ते और मुर्गियाँ पालते हैं।

पथरीले प्रदेश की प्राकृतिक स्थिति के कारण अदि अपने जीवन निर्वाह के लिए झूम कृषि करते हैं—जिसे 'अदि अरिक' (Adi Arik) कहते हैं। इसमें पहिले ये जंगलों को काट कर उनमें आग लगा देते हैं और फिर उस भूमि पर दो-तीन वर्ष लगातार फसल उपजाने के उपरान्त उसे एक निश्चित काल तक आवर्तन के लिए ऐसे ही ऊसर छोड़ देते हैं। यह कालावधि ९ से १५ साल तक की है। बहुधा यह अवधि वहाँ पर भूमि की स्थिति, उसकी आवश्यकता और उपजाऊ शक्ति पर निर्भर करती है। इनकी प्रमुख उपज चावल, ज्वार बाजरा, और मक्का है। इनके अतिरिक्त ये कपास, अदरक, मिर्च, शकरकन्द, लौकी, कुम्हड़ा तथा अन्य साग पात भी चावलों के ही खेतों में उपजाते हैं।

अदि में सबसे अधिक संख्या कृषकों की है। इनमें से प्रत्येक की अपने देश की सीमा के अंतर्गत संपूर्ण कृषियोग्य भूमि दो प्रकार के भागों में बाँटी जाती है। प्रथम को 'पतात्' अथवा खेत कहते हैं। इसमें अदि अरिक स्थानीय आवर्तन के अनुसार होती हैं। द्वितीय को 'अरिक' कहते हैं। इसका अर्थ है ग्राम के प्रत्येक अधिवासी को उसकी आवश्यकता के अनुसार 'पतात्' वितरण करना। प्रत्येक ग्रामवासी के पास कुछ पतात् होते हैं जिनमें वह प्रतिवर्ष खेती करता है। इन भूमि भागों में बहुधा वे हिस्से सम्मिलित रहते हैं जिन्हें किसी एक परिवार के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोगों ने आरंभ में जंगलों को काट कर खेती के लिए तय्यार किया था। यह भूमि उनके वंशजों को दी जाती है। किन्तु कुछ ग्रामों में सार्वजनिक सामान्य भूमि को 'मीली पतात्' कहते हैं जिसका भौमिक अधिकार ग्राम को होता है। कृषियोग्य भूमि के अभाव में ज़रुरतमन्द लोगों को इस पर खेती करने की अनुमति दी जाती है। इसके लिए ग्राम पंचायत किसी प्रकार के प्रतिदान की मांग नहीं करती। कृषिफल कट जाने के उपरान्त भूमि फिर ग्राम सभा को वापिस कर दी जाती है। खेतों के प्रादेशिक आवर्तन के अतिरिक्त अदि वार्षिक फसलों का आवर्तन भी करते हैं। उत्तरी विभागों में जहाँ पर ऊँचे गहरे पहाड़ी खण्डों में खेती की जाती है, वहाँ प्रमुख अनाज 'अनयात' के साथ ही साथ अयक व ज्वार बाजरा की खेती नए पतात् में की जाती है जो प्रादेशिक आवर्तन अवधि के अनुसार इस समय खाली पड़े रहते हैं। इन्हीं खेतों में अगले वर्ष चावल और मीरुंग (ज्वार बाजरा) की खेती की जाती है और फिर इन्हें ऊसर छोड़ दिया जाता है। पहाड़ियों के निचले भागों में इनके प्रमुख आहार चावल की खेती क्रमशः दो वर्षों तक की जाती है। यहाँ पर चावल के साथ ही साथ मक्का, अयक, तथा मीरूंग (ज्वार बाजरा इत्यादि) की भी खेती होती है। किन्तु जब अनयत् बोया जाता है तो ऊसर छोड़ने के पूर्व लगातार तीन साल तक खेती की जाती है। जंगलों की कटाई बहुधा अप्रैल माह में होती है। कटाई के एक माह के बाद सूखी लकड़ियों में आग लगा दी जाती है। उपरान्त खन्ती से जमीन में छोटे छेद कर उनमें चावल, मक्का, अनयात आदि के बीज बोए जाते हैं। दूसरे अनाजों अर्थात् ज्वार बाजरा के बीज छिटका कर बोए जाते हैं। खेतों की निराई बाँस से निर्मित खुदनी—जिसका आकार घोड़े की नाल का होता है—उससे की जाती है। इनका फसल काटने का ढंग आदिम है। ये धान और अनयात की बालें हाथ से ही तोड़ तोड़ कर शन्क्वाकार टोकरी में रखते जाते हैं। अयक की बालें हाथ से तथा मीरुंग की एक छोटे चाकू से काटी जाती हैं। फसल काट कर इकठ्ठी कर लेने के उपरान्त अनाज खलिहानों में दल कर तथा उसा कर साफ किया जाता है। ये सब कार्य खेतों में ही संपन्न कर अनाज अपने भण्डार घरों में एकत्रित करते हैं। पहाड़ियों के चरण तल के ग्रामों में अदि हलकृषि कर अपने जलभरे खेतों में धान उपजाते हैं।

आशातीत कृषिफल की सफलता के लिए अदि कृषि कर्म की विभिन्न स्थितियों में अलौकिक उपचार भी करते हैं। वे सामाजिक रूप में 'कीनेनाने' अर्थात् धरती-माता और उसके पति तथा आकाश देवत। 'डोईबोते' को मिथान और सुअर की बलि भेंट चढ़ाते तथा फसल की फलोन्नति के लिए इनकी विनती करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रत्येक बलिभेंट के उपरान्त कुछ दिनों के लिए 'गेना'* मनाया जाता है जिसमें सभी बाहिरी कार्य कलाप बन्द कर दिए जाते हैं।

खेतों के अधिकतम् कार्य पति पत्नी बच्चे तथा परिवार के अन्य सदस्य मिल जुल कर करते हैं। किन्तु आवश्यकता पड़ने पर परिवार की सहायता के लिए 'रसेन्ग' (कन्याओं के शनयगृह) या 'पोनून्ग' (ग्रामबालाओं की टोली) अथवा मोसुप (युवा शयनगृह) के लड़कों की टोलियाँ आकर उनके काम में हाथ बंटाती हैं। इनके श्रममूल्य के रूप में इन्हें एक टोकरी धान—जो लगभग १५ सेर होता है, अथवा 'तद्दक' अर्थात् मणि-मोती जिनकी कीमत ५ से ६ रुपये तक होती है इन्हें दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त जैसी कि यहाँ की रीति है—घर का स्वामी खेतों में काम आरंभ होने के दिन चावल और मादक पेय (चावल की मदिरा) के द्वारा इनका स्वागत करता है।

इनका प्रमुख मादक पेय 'अपाँग' है जिसे मीरुंग अनाज से तय्यार किया जाता है।

अदि की बड़ी संपत्ति मिथान, तद्दाक, मणिमोती एवं डान्की (Dankis) में सन्निहित रहती है। इनमें से डान्की अर्थात् पीतल का भाजन जिसका व्यास लगभग डेढ़ फुट होता है, आज भी वस्तु विनिमय का प्रमुख साधन समझा जाता है। इसे इन्होंने तिब्बत से प्राप्त किया था। इसमें रुढ़िगत् बौद्ध धर्म के चिन्ह जैसे मछली, कमल, शंख, छतरी व चक्र इत्यादि से अंकित सजावट होती है।

अदि में विवाह की रीति बड़ी साधारण होती है। प्रत्येक वर्ग कुछ बर्हि-विवाही वंशों में बंटा रहता है। ये अपने से बाहर वंश में अपना साथी चुनते हैं। एक बार लड़की के माता पिता द्वारा स्वीकृति दे देने के उपरान्त उसका होने वाला पति प्रत्येक रात्रि को उसके पास आता रहता है। और इस प्रकार कुछ वर्षों के उपरान्त उसे अपनी पत्नी को अपने घर ले जाने की अनुमति मिलती है। यद्यपि यहाँ बहुविवाह की रीति मिलती है किन्तु वास्तव में प्रयोगरूप में वह प्रचलित नहीं। यहाँ तलाकप्रथा का प्रचार है। विधवा हो जाने पर स्त्री अपने पति के भाई के साथ विवाह कर सकती है।

अदियों का धर्म इनके परंपरागत् विश्वासों पर केन्द्रित है। ये बहुत सी अच्छी व बुरी दैवी शक्तियों पर विश्वास करते हैं। इन्हें ये 'उयू' और 'उरोम' कहते हैं। इनमें से उयू अर्थात् कल्याणकारी दैवी शक्तियों का संबंध कृषि, पशुधन

---

* गेना—अलौकिक उपचार विधि जिसके अंतर्गत कुछ विशेष कार्यकलाप निषिद्ध रहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा ग्राम की सामान्य समृद्धि से रहता है। इनके लिए विश्वास है कि ये आकाश व पाताल में रहती हैं। किन्तु अन्य विनाशकारी प्रेत शक्तियाँ जो पर्वतों जंगलों तथा जलधाराओं के आस पास भ्रमण करती रहती हैं, 'टालेन्ग', 'निपोंग' तथा 'उरोम' कहलाती हैं। ये सब अत्यन्त ही भयानक होती हैं। इनका कार्य आकस्मिक दुर्घटनाऐं और मृत्यु निपतित करना है। इनके अतिरिक्त और भी बहुत सी भयावह प्रेतशक्तियाँ हैं जो दूसरी प्रकार की व्याधियाँ फैलाती हैं। बीमारी के अवसर पर ये लोग यहाँ के पुजारी 'मीरू' उपचारार्थ नियुक्त करते हैं। वे इन प्रेतों को अपनी उपासना शक्ति के द्वारा दूर हटाने-उनके प्रभाव को मिटाने का प्रयास करते हैं। इन प्रेतों का शमन करने के लिए वे मिथान, सुअर, मुर्गियों तथा कुत्तों तक की बलि चढ़ाते हैं।

अदि अपने मृतकों को समाधिस्थ करते हैं, और समाधि के ऊपर एक छोटी झोपड़ी का निर्माण करते हैं। यदि कोई बच्चा मर जाए तो ये उसकी समाधि पर बाँसों की शन्क्वाकार (conical) संरचना करते हैं। मृत व्यक्ति के निजी प्रयोग की वस्तुऐं समाधि के सामने टाँग दी जाती हैं और कुछ दिनों तक प्रत्येक दिन समाधि पर उसके परिवार के लोग भोजन और पेय पदार्थों की भेट चढ़ाते हैं।

अदि प्रजातंत्रीय है। उनकी सामाजिक, राजनैतिक एकाई (सत्ता) कोई कबीला (आदिम जाति) या कबायली (आदिम वर्ग) न होकर ग्राम है। प्रत्येक अदिग्राम में कुछ 'गाम' अर्थात् प्रमुख चुने जाते हैं। शासन-व्यवस्था में इनकी (गाम) सहायता 'केबान्ग' अर्थात् ग्रामपंचायत करती है। केबान्ग ग्राम के शासन तथा न्यायसंबंधी सभी मामलों को देखती है। वे ऐसे मामलों को भी तय करते हैं—कि कब और कहाँ—किस जंगल को कृषि के हेतु काटा जायगा, कब कौन सी सड़क और पुल बनाया जायगा अथवा किस प्रकार वार्षिक उत्सवों अथवा बलि उत्सवों को मनाया जायगा। इसके अतिरिक्त केबान्ग उसके पास लाए गए अपराध के मामलों को भी देखती एवं अपराधियों को नाना प्रकार के दण्ड देती है।

अदि के सामाजिक धार्मिक जीवन में संगीत का प्रमुख स्थान है। यहाँ स्त्री व पुरुष एक साथ ही गाते और नाचते हैं। ये मीरु की ताल गति के अनुरूप ही पदचालन कर नृत्य करते हैं। मीरु उनके इन नृत्यों का गायक और संचालक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंगामी नागा

नागा पर्वत मालाओं के अंतर्गत ४२७६.१ वर्गमील भूमि विस्तृत है। इसके उत्तर में शिबसागर, पूर्व में नागा आदिम जातीय प्रदेश, दक्षिण में मनीपुर तथा पश्चिम में मिकिर व उत्तरी कछार पर्वत मालाऐं स्थित हैं। इस क्षेत्र के दो बड़े उपविभाग हैं—प्रथम कोहिमा और दूसरा मोकचूग।

नागा पर्वत मालाओं पर रहने वाली सबसे प्रमुख जाति अंगामी, आओ, सेमा तथा लोहटा हैं। इनमें से सबसे खूंखार और युद्धप्रिय अंगामी हैं जो कोहिमा के पड़ोस में बसे हुए हैं।

अंगामियों की वर्तमान जनसंख्या २८,३११ है, इनमें १५,०३७ पुरुष और १३,२७४ स्त्रियाँ हैं। साधारणतः अंगामी नागा की ऊँचाई ५ से ६ फुट तक, नाक चपटी और आँखें कुछ तिरछी होती हैं। इनकी आँखों का रंग भूरा और केश काले व सटकारे होते हैं।

अंगामी ग्राम अधिकतर या तो पहाड़ी के शिखर पर अथवा पार्श्व के सकरे अंचलों में बसे होते हैं। गाँव में प्रवेश के लिए एक बड़ा सिंहद्वार (फाटक) होता है। ग्राम में घरों की व्यवस्था अनियमित है। ये ग्राम की सीमा के अंतर्गत कहीं भी अपनी सुविधानुसार घर बना लेते हैं। अंगामी घर बहुधा एक ही मंजिल के होते हैं। इनके घर के सामने तख्ते रहते हैं और छत फूस से छाई हुई ऊपर से नीचे की ओर कुछ फुट ढलान में झुकी हुई होती है। इनके घर की पिछली और दोनों ओर की दीवालें बहुधा जमीन से लगी बाँस की चटाईनुमा बनी होती हैं। सामने की दीवाल लकड़ी की होती है। ये बहुधा इसे मनुष्य, मिथान और सुअर आदि के कटे शिरों से सजाते हैं। यह इनका अत्यंत ही प्राचीन रूढ़िगत सजावट का ढंग है। धनी वर्ग के लोग अपने घरों के अग्रभाग को बहुधा स्त्री, पुरुषों, मिथान और ढाल आदि के भीत्ति चित्रों से सजाते हैं।

बच्चे विवाह काल तक अपने माता पिता के साथ ही रहते हैं, किन्तु किशोरावस्था से उनके शयन की व्यवस्था अन्यत्र होती है। युवाओं के शयनगृहों को जहाँ पर वे रात्रि व्यतीत करते हैं 'मोरुंग' कहते हैं। मोरुंग अथवा युवा निवास का संपूर्ण नागा जातियों में एक विशेष स्थान रहता है परन्तु अंगामी ग्रामों में उसका इतना महत्व नहीं। बहुत से अंगामी ग्रामों में मोरुंग नाम मात्र को भी नहीं। बहुत से उदाहरण ऐसे हैं जहाँ पर मोरुंग का अंगामी ऐसा कोई प्रयोग नहीं करते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसा कि आओ तथा अन्य दूसरी जातियों में होता है। किन्तु कुछ अनुष्ठानों और 'गेना'* मनाने के समय यह स्थान वंश विशेष के केवल युवा पुरुषों के लिए निश्चित रहता है। दूसरे अवसर पर जहाँ गाँव के हिरण (bucks) विश्राम करते हैं कुछ ऐसे युवक जिन्हें अपने माता पिता के घर में कुछ समय के लिए असुविधा होती है वे यहाँ कभी कभी रात्रि बिताने आते हैं। प्रत्येक नागा ग्राम कुछ 'खैलों' में बंटा रहता है। प्रत्येक 'खैल' के नवयुवकों के पृथक मोरुंग होते हैं जहाँ १०-१२ वर्ष की अवस्था से लड़के रात में सोने जाते हैं।

प्रत्येक खैल के समीप ही मोरुंग स्थित रहते हैं। वे ग्राम के अन्य घरों से अलग होते हैं। हर एक खैल के युवक को अपने मोरुंग पर गर्व होता है। वे उसे अपनी सामर्थ्य भर सजाने का प्रयास करते हैं। मोरुंग में दूसरे घरों की भाँति पृष्ठ भाग की ओर कोई खुला बरामदा नहीं होता। स्त्रियाँ कभी भी मोरुंग नहीं जातीं उनके लिए यह स्थान निषिद्ध होता है।

अंगामी घरों में नित्य प्रति के प्रयोग के कुछ विशेष बर्तन मिलते हैं। जैसे—

(१) बाँस से निर्मित सुखचित सुसज्जित पात्र जिन्हें ये पानी पीने के काम में लाते हैं।

(२) खाना पकाने के लिए मिट्टी के भाजन—यह बड़े आकार की हाँडी के समान होता है। इसमें ये गोश्त या चावल पकाते हैं अथवा मदिरा बनाने के लिए पानी उबालते हैं। इन बर्तनों को बनाने के लिए जिस मिट्टी का प्रयोग किया जाता है वह अंगामी प्रदेश के कुछ विशेष ग्रामों में ही मिलती है।

(३) कुष्माण्ड पात्र—जिनमें ये मदिरा इकट्ठा करते एवं एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाते हैं।

(४) लकड़ी की थालियाँ—ये सभी आकार और नमूने की मिलती हैं। इनमें सबसे अधिक लोकप्रिय गोल आकार की चार पायों वाली थाली होती है।

मूलतः अंगामियों के वस्त्रादि देशी होते हैं। कपड़े बनाने की संपूर्ण प्रक्रिया यहाँ स्त्रियों के द्वारा ही संपन्न होती है। परन्तु पुरुषों के लिए कताई बुनाई के यंत्रों को छूने का कोई निषेध नहीं। इनकी सूची शिल्पकला बहुधा त्रिकोणीय होती है। यहाँ पर स्त्रियाँ कढ़ाई के लिए या तो उसी प्रकार के सूती रंगीन धागों का प्रयोग करती हैं या मैदान के बाजारों से ऊन खरीदकर लाती हैं। आज कल

---

* गेना—कृ. देखिए पृष्ठ संख्या—१७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर्घे पर घांघरा बुनती हुई एक अंगामी महिला।

नागा पर्वतमाला प्रदेश, आसाम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

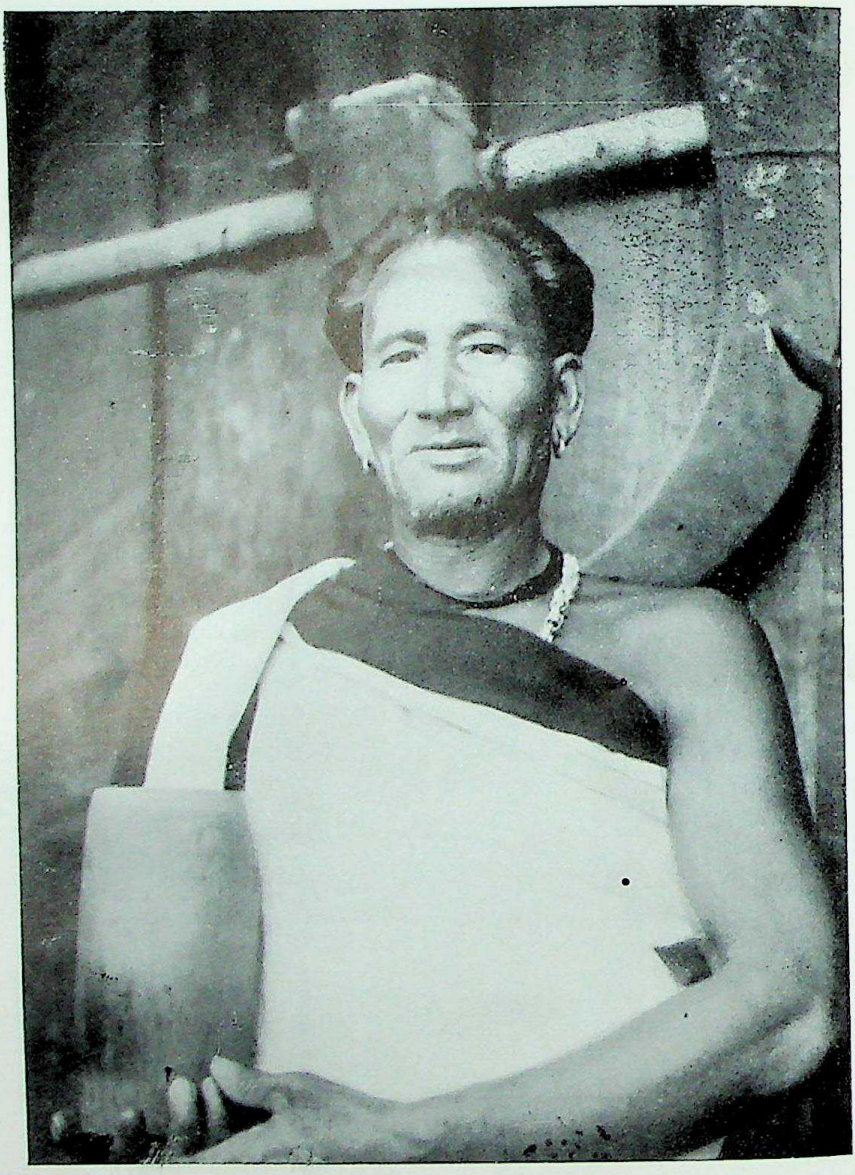

एक अंगामी नागा ग्राम प्रमुख।

नागा पर्वतमाला प्रदेश, आसाम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ये जिस सुई का प्रयोग करती हैं वह बहुधा फौलाद की होती है और बाहर से लाई जाती है।

कपड़ा बुनाई के अतिरिक्त इनका दूसरा उद्योग लुहारी का है। इनकी बनाई हुई प्रमुख वस्तुऐं—भाले के शीर्ष, कुन्दे, धनुष, कुल्हाड़ी, फावड़े, कुदाली, चाकू इत्यादि हैं।

करण्ड कार्य भी यहाँ का प्रमुख उद्योग है। ये भिन्न प्रकार के प्रयोग के लिए टोकरियाँ बनाते हैं। ये या तो घर में रखने के लिए होती हैं अथवा पीठ पर लाद कर सामान ढोने के लिए। यहाँ रंग बिरंगे बेतस के महीन तारों से सुन्दर गुलूबन्द, बाजूबन्द, साकबन्द* इत्यादि भी बनाए जाते हैं।

नागा पर्वत पर रहने वाली आदिम जातियों का मुख्य उद्यम कृषि है। यहाँ पर कृषि कर्म का साधारण ढंग 'झूम कृषि' अथवा 'चल कृषि' है। ये किसी एक भूमिखण्ड पर दो वर्ष तक खेती करने के उपरान्त उसे ऊसर छोड़ देते हैं। अंगामियों में भी अधिकतर झूम कृषि होती है। इन्होंने 'अंचल कृषि' और सिंचाई के वृहद्तम तरीकों को भी अपना लिया है जिससे ये दुर्गम पहाड़ियों में भी धान के लहलहाते खेत उगा लेते हैं। अपने गाँव के नीचे और ऊपर की ओर के ढलवाँ पहाड़ों पर ये सोपानवत् अंचल भूमि खेती के लिए तय्यार करते हैं। इन खेतों को वे पहाड़ी जलधाराओं से सींचते हैं। पानी की धाराओं को वे बड़ी कुशलता से छोटी बड़ी नहरों में विभक्त कर अंचल खेतों की ओर ले जाते हैं।

प्रत्येक अंचल भूमि के लिए पृथक जलधारा अथवा नहर नहीं होती परन्तु उन्हें जल अपने से ऊपर वाले खेतों से मिल जाता है। ये इन अंचल भागों को क्रमशः एक दूसरे के अन्तर पर इस प्रकार बनाते हैं कि पानी एक से ढलक कर दूसरे में जाता रहता है। बहुधा बाँस की नलिकाओं द्वारा भी प्रत्येक खेत में पानी ले जाया जाता है।

अंचल कृषि के लिए बहुत अधिक जल की आवश्यकता होती है। बिना जल के अंगामी गाँवों का अस्तित्व ही नहीं रह सकता। आरंभ में इन खेतों के निर्माण में बहुत परिश्रम की आवश्यकता होती है। किन्तु एक बार निर्माण हो जाने पर ये झूम खेतों से कम कष्टदायी होते हैं। एक तो ये गाँवों के समीप होते हैं—और फिर प्रतिबार जंगलों के काटने की आवश्यकता नहीं होती। बहुधा वर्षा के जल से ही अंचल कृषि का काम निकल जाता है। अंगामी नागाओं की कृषि का यह ढंग समीपवर्ती सिआम, आओ आदि जातियों से नितान्त भिन्न है।

---

* साकबन्दः—पिंडलियों पर पहिनने की सजावट की चीजें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वे लोग बहुधा झूम पर ही निर्भर रहते हैं। इसी प्रकार इनका स्वत्व भी जातिगत नहीं अपितु पूर्णतया व्यक्तिगत होता है।

अंगामियों में बहुत से बर्हिविवाही वर्ग होते है। एक ही वंश के लोगों का आपस में विवाहों का पूर्ण निषेध है। विवाह के उपरान्त पुत्र अपने लिए पृथक निवास बनाता है। ग्राम में सामाजिक जीवन की वास्तविक और पूर्ण एकाई वंश (clan) है। एक ही ग्राम में एक दूसरे वंश के प्रति पारस्परिक स्पर्धा ने संपूर्ण अंगामी जीवन को रक्तरंजित कर दिया है। मूलतः इनका वहिर्विवाही विभाजन 'केल्हू' है। केल्हू के पुनः छोटे विभाजन 'थीनो' कहलाते हैं इनके पुनः छोटे विभाजन 'थीनोस' होते हैं। उपरान्त इनकी खण्डित छोटी एकाई 'पुत्रा' होती है। वर्तमान युग में 'पुत्रा' ही इनकी वास्तीवक बर्हिविवाही एकाई है।

कोई भी व्यक्ति अपने रक्त संबंधियों के अतिरिक्त और किसी को अपनी संपत्ति इच्छानुसार नहीं दे सकता। केवल पुरुषगण ही पैत्रिक संपत्ति उत्तराधिकार में हमेशा के लिए प्राप्त करते हैं और एक ही पीढ़ी के सभी पुरुष एक समान रुप में उसका उपभोग करते हैं। यदि किसी के अपना पुत्र न हो तो उसके संबंधी भाइयों (First cousins) में वह समान रूप में बाँट दी जाती है। स्त्री की अपनी संपत्ति भी उसके बच्चों को मिल जाती है। उसके निजी आभूषण सदैव उसकी पुत्री को मिलते हैं। यदि उसके स्वयंसंतान न हो तो उसकी निजी संपदा उसके पिता के घर के उत्तराधिकारियों को मिल जाती है।

अंगामी समाज की दूसरी ध्यान देने योग्य विशेष क्रिया अंत्येष्टि संस्कार की है। गाँव में किसी की मृत्यु हो जाने पर उसे नहला धुला कर अच्छे वस्त्र पहिनाते हैं। फिर उसके पुत्र अथवा निकट संबंधी उसके लिए समाधि (कब्र) खोदते हैं। समाधि पूर्व-पश्चिम की दिशा में खोदी जाती है। पुरुषों को पूर्व की ओर मुख कर और स्त्रियों को पश्चिम की ओर मुख कर समाधिस्थ किया जाता है। उपरान्त परिवार की आय के अनुसार ही उसकी मृत्यु के लिए सुअर अथवा गाय की वलि भेंट की जाती है। समाधि एक साधारण खाई के रूप में बनाई जाती है। मृतदेह पर कफ़न का कोई कपड़ा नही होता। शव को तख्त पर रख कर ले जाते हैं। व्यक्ति के साथ ही साथ उसके प्रयोग की कुछ वस्तुऐं जैसे—२ भाले, एक दाव, एक ढाल, एक कुष्माण्ड पात्र, उसका धूम्रपान का पाइप (pipe) और धनुष भी समाधिस्थ कर देते हैं। स्त्रियों के साथ उनकी लोहे की छड़ी, एक कुष्माण्ड, वर्षा से रक्षार्थ छतरी और उनकी बुनाई का कर्घा उनके साथ समाधिस्थ करते हैं। बहुधा वे ही व्यक्ति जिन्होंने समाधि खोदी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

थी उसे पाट भी देते हैं। मिट्टी से पाट देने के उपरान्त उसी स्थान पर एक मुर्गी की बलि चढ़ा कर वहाँ टाँग देते हैं। भिन्न स्थानों पर यह रीति कुछ भिन्न रूप में मिलती है, किन्तु मुर्गी की बलि प्रायः हर जगह दी जाती है। मृत्यु हो जाने के उपरान्त उस घर के लोग पाँच दिन तक 'गेना' मनाते हैं।

यदि कोई मनुष्य अपराध करता है तो उसे वहाँ के नियमों के अनुसार दण्ड दिया जाता है। साधारण अपराध जैसे—'गेना' मनाने के नियमों को भंग करने पर वंश के लोगों को साधारण दण्ड जुरमाने के रुप में देना पड़ता है। यह धन ग्रामनिधि में इकट्ठा हो जाता है। बलात्कार के अपराध पर बलात्कारी की खोज कर उसे तीन माह के लिए ग्राम से बाहर निकाल देते हैं।

अंगामी नागाओं में पहिले शीश आखेट प्रचलित था। उनका यह विश्वास था कि मानव बलि देने से उनके खेतों की फसल अच्छी होगी।

अंगामी 'आत्मतत्व' पर भी विश्वास करते हैं। यह उनके धर्म का विशेष अंग है। आदमी की मृत्यु हो जाने पर या तो घर के सामने अथवा ग्रामपथ के किनारे समाधि खोदी जाती है। समाधिस्थ करने के पूर्व मृतदेह को कपड़े से लपेट कर शवपेटी (coffin) में रखते हैं। पुरुष होने पर मृतदेह के साथ भाला और स्त्री के साथ एक काले कपड़े का टुकड़ा और कुछ मणिमोती रखते हैं। फिर शवपेटी पर कुछ चपटे पत्थर रखे जाते हैं। खासी भी क़ब्र के ऊपर पत्थर का मकबरा (समाधि) बनाते हैं। पुरुष की समाधि पर वे बलि किए हुए पशु के शिर, हथियार, पीने के पात्र इत्यादि रखते हैं। किन्तु स्त्री की समाधि पर एक टोकरी में बुनाई और कताई के यंत्र इत्यादि रखे जाते हैं। अंगामियों का विश्वास है कि स्वर्ग में भी स्त्री पुरुष यहाँ की भाँति ही जीवन व्यतीत करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खासी

आसाम की संयुक्त खासी पर्वतमाला तथा जयन्तिया पर्वतमाला प्रदेश के शिलाँग तथा जोवाई नामक दो उपविभाग हैं। इनमें से प्रथम को खासी पहाड़ियाँ भी कहते हैं। यहाँ पर खासी आदिम जाति की विभिन्न उपजातियाँ—जैसे खासी, भोई, वार तथा लिंगम रहती हैं। इनमें से प्रथम समूह (खासी) मध्य उच्चसम भूमि में, भोई व वार क्रमशः उत्तरी व दक्षिणी ढलानों पर तथा लिंगम पश्चिमी सीमा पर बसे हुए हैं। इनमें तथा प्रतिवेशी गारो में आपस में बहुत कुछ समानता है। जोवाई पूर्वी उपविभाग का मुख्यालय है। इसे जयन्तिया पहाड़ियाँ भी कहते हैं। यहाँ पर एक अन्य उपजाति 'प्नार' रहती है। इन्हें 'सिन्टैन्ग' भी कहते हैं। भाषाविज्ञों का कथन है कि यह शब्द मूलतः 'ज़ैनटैन' (zeinten) शब्द से लिया गया है। और यह आर्यभाषाभाषियों के संस्पर्श में समय के आवर्तन से परिवर्तित होते होते 'जयन्तिया' बन गया। इसका नामकरण जयन्तियापुर के राजा के नाम पर भी आधारित कहा जाता है। जयन्तियापुर पर्वतांचल में स्थित है और आजकल पाकिस्तान की सीमा के अंतर्गत है। जयन्तिया पर्वतमालाओं पर रहने वाली एक बड़ी संख्या की गणना जयन्तियों के नाम से की गई है। सन् १९५१ ई० की जनगणना के अनुसार यहाँ १२७५२ प्नार तथा २६०९७ सिन्टैन्ग हैं। इनके अतिरिक्त अन्य विभागों की संख्या का पूरी तरह निर्धारण न कर उन्हें खासी कहा गया है। इनकी संख्या २,२३,४१३ है। इन सबकी संख्या का योग करने से खासियों की कुल संख्या २,९४,६७९ हो जाती है।

खासी भाषा मोनखमेर परिवार की है। इसके चारो ओर सिनो-तिब्बती भाषा आसाम की दूसरी आदिम जातियाँ बोलती हैं। बहुधा आपस में ये एक दूसरे की भाषा समझ नहीं पाते। परन्तु इन दो उपविभागों में दक्षिणी खसियों को 'वार खासी' और 'वार प्नार' उनकी भाषा के दृष्टिकोण से ही कहते हैं। इनकी भाषा बहुत कुछ खासी और प्नार के समान है।

इनके प्राचीन इतिहास के संबंध में कुछ कहना अत्यंत ही कठिन है। वह बहुत कुछ दुर्ज्ञेय है। परन्तु उनका विश्वास है कि वे अपने वर्तमान स्थान में कहीं उत्तर दिशा से आए थे और यहाँ आकर आज की अपेक्षा एक विस्तृत क्षेत्र में बस गए। जाति तत्व के दृष्टिकोण से ये मंगोलीय हैं। इनका वर्ण हलकाभूरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाज़ार की ओर अभिमुख खासी बालाओं का समूह।

संयुक्त खासी जयन्तिया पर्वतमाला प्रदेश, आसाम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्सव की सज्जा में खासी पुरुष।

संयुक्त खासी जयन्तिया पर्वतमाला प्रदेश, आसाम।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। इनमें से मध्यवर्ती पठारों के निवासी अन्य खासी समहों से वर्ण में अधिक हलके अर्थात् गौरवर्णी हैं। इनका शीर्ष मध्यम आकार का (मेसों सेफालिक) एवं शरीर नाटा होता है।

इन्होंने अपने परंपरागत् पहनावे 'ज़िमफौन्ग' को लगभग पूरी तरह से छोड़ दिया है। ज़िमफौन्ग एक प्रकार की जाकेट होती है जो कमर तक लटकी रहती है और जिसमें गला और बाहें खुली रहती हैं। इनका अधच्छद मैदानी लोगों की भाँति बिना सिला कपड़ा होता है। लेकिन आज कल वे सभी प्रकार की बाजारों में प्राप्त पोशाकें पहिनते हैं। किन्तु स्त्रियों की वेश भूषा में कोई बड़ा दृष्टिगत परिवर्तन नहीं हुआ। स्त्रियाँ पूरी बाँह का आधुनिक ब्लाउज़ पहिनती हैं और पेटीकोट अधच्छद का काम देता है। इसके ऊपर 'काज़ैनसेन' नामक लम्बा वस्त्र पहिना जाता है। इसके ऊपर 'का ज़ैन कुफ' पीठ के ऊपर पहिना जाता है। यह बिलकुल क्लोक की भाँति होता है। इसमें सामने की ओर गाँठ दी जाती है।

शिर ये एक दूसरे वस्त्र खण्ड से ढंकती हैं इसे 'तपमौख्लीह' (Tap-maw-khlieh) कहते हैं। कभी-कभी स्त्रियाँ मोज़े भी पहिनती हैं। इनके मोज़े केवल कपड़े के लम्बे टुकड़े होते हैं जिन्हें पैरों के चारो ओर लपेट लिया जाता है।

इनके ग्राम पहाड़ी की चोटी पर नहीं बसाए जाते। वायु के प्रवेग से रक्षार्थ वे कुछ निचाई की ओर अपने ग्राम बसाते हैं। संभवतः ही कभी वे अपने ग्राम का अभिद्रश्य रुख बदलते हों। इसके साथ उनका विशेष लगाव रहता है। इनके साधारण घर फूस से छाए कुटीर होते हैं। जिनकी दीवालें तख्तों व पत्थरों की होती हैं और वे धरती से एक या दो फुट ऊँची न्याधार पर बनाए जाते हैं। घर के सामने ढका हुआ ओसारा (ड्योढ़ी) और तीन कमरे होते हैं। इनमें से एक कमरे में रसोई होती है जिसके मध्य अग्निस्थल या चूल्हा होता है। दूसरे दो कमरों में से एक शयनगृह और दूसरा भण्डार गृह होता है। इनमें से आखिरी कमरे में बहुधा गृहदेवता की पूजा का स्थान रहता है। गृह-निर्माण में ये अपने परंपरागत नमूने पर ही दृढ़ नहीं रहते। किसी प्रकार के आराम की व्यवस्था होने पर ये परंपरागत ढंग को बदल देते हैं, जैसे आजकल फूस के छप्पर के स्थान पर ये लोहे की चादरों अर्थात टीनों का प्रयोग करने लगे हैं। साधारणतया ये भूमि पर चटाई बिछा कर सोते हैं, परन्तु धनीवर्ग के खासी लकड़ी की चारपाइयों का भी प्रयोग करते हैं। इनके घर के व्यवहार की वस्तुओं में आजकल एनामेल, अलमोनियम, तथा काँच की चीजों ने परंपरागत बर्तनों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का स्थान ले लिया है। सामान इकट्ठा कर रखने के लिए ये आज भी स्थानीय बाँस की टोकरियों का प्रयोग करते हैं। इनमें से कुछ शन्क्वाकार (conical) होती हैं। इनका मुख चौड़ा और गोलाकार होता है किन्तु पेंदे की ओर छोटी और सकरी होती जाती है। इनमें सामान भर कर बाजार अथवा यात्राओं में ले जाया जाता है।

ये दिन में प्रायः दो बार भोजन करते हैं, किन्तु इसी के लिए इन्हें अथक परिश्रम करना पड़ता है। कृषक अवश्य दिन के मध्य दोपहर में एक बार और भोजन करते हैं। इनका आहार चावल और तरकारी का होता है। तरकारी के स्थान पर बहुधा ये मछली और गोश्त भी खाते हैं। पूर्वी खासी पहाड़ियों के प्नार गौमांस नहीं खाते। प्रायः सभी जातियाँ एवं खासी उपजातियाँ सूखी मछली बड़े प्रेम से खाती हैं। ये चावल से दो प्रकार की मदिरा—(१) 'आसवन' अर्थात अर्क खींची हुई और (२) 'किण्वन' अर्थात उबाली हुई बनाते हैं। इनमें से किण्वन का प्रयोग बहुधा सामाजिक धार्मिक अवसरों पर किया जाता है।

खासी बहुधा कृषक हैं। वे झूम व जलकृषि दोनों ही करते हैं। धान यहाँ छितराकर बोए जाते हैं। ऐसे खेतों में सिंचाई नहीं की जाती और न किसी अन्य रूप में पानी दिया जाता है। जल कृषि में घाटी की सतह को कुछ हिस्सों अर्थात् 'लिन्गखोट' में बाँट देते हैं जिनमें पतली सकरी जलधाराओं द्वारा जल पहुंचाया जाता है। पश्चिम के खासी धरती गोड़ने के लिए अपने यंत्र 'माउ खेइयू' का ही प्रयोग करते हैं किन्तु प्नार 'कालिन्घोर' अर्थात हल का प्रयोग करते हैं। यहाँ प्रतिरोपण अर्थात् पौधों को उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगाने का ढंग प्रचलित नहीं। ये बीज छिटका कर बोते हैं। चावल यहाँ दो प्रकार का होता है। दक्षिणी ढलानों पर नारंगियों की खेती की जाती है और मध्य उच्चसम स्थलों में आलुओं की उपज विशेष कर होती है।

मई माह के आरंभ में वर्षा की प्रथम झड़ी के उपरान्त ही खासी अपने कृषि कर्म आरंभ कर देते हैं। कभी कभी वे मक्का ज्वार बाजरा व शकरकन्द अपने बगीचों में बोते हैं और इस प्रकार कठिन काल में अपना समय ये बहुधा अपने बगीचों में श्रम कर बिता देते हैं और शेष समय जंगल की लकड़ियां चुनते हैं। यह ईंधन ये साल भर के लिए इकट्ठा कर लेते हैं।

खासी मातृवंशी हैं। इनके यहाँ उत्तराधिकार मातृगत् होता है। इनकी सबसे छोटी सामाजिक एकाई परिवार है। माँ अपने शिशुओं के सहित अपने ही घर पर रहती है। पूर्वी खसियों में इस दृष्टिकोण से भिन्न रीति प्रचलित है। यहाँ पति अपने जीवन पर्यन्त अपनी मां के घर ही रहता है। वह केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रात्रि में अपनी पत्नी के पास आता है। सबसे छोटी कन्या जिसे का-खादूह कहते हैं संपत्ति की उत्तराधिकारिणी होती है। अधिकांश संपत्ति उसे गृहदेवता की पूजा अर्चना के हेतु दी जाती है। वह पूर्वजों की संपत्ति की एक प्रकार से अभिरक्षक होती है। संपूर्ण संपत्ति की अधिकारिणी होने के नाते ही उसका यह दायित्व होता है कि वह अपनी किसी बहिन के निधन के उपरान्त उसके बच्चों का लालन पालन करे। दक्षिणी खासी पर्वतमालाओं के 'वार' अवश्य संपूर्ण संपत्ति को लड़कों लड़कियों में बराबर बराबर बाँट देते हैं। घर में मां के भाई अर्थात् मामा का विशेष स्थान होता है। वही एक प्रकार से घर का कर्त्ता धर्ता और अभिभावक होता है। प्रत्येक सामाजिक धार्मिक उत्सवों और अनुष्ठानों में उसकी अनुज्ञा ली जाती है। खासी जाति के लोग अपना उद्भव अपनी एक पूर्वजा 'का-जौबेई तिन्रीर' से मानते हैं। किसी एक पूर्वजा के वंशज अपने को एक ही वंश अर्थात 'शिकूर' का मानते हैं। ये बहिर्विवाही हैं अर्थात् वंश से बाहर कुटुम्ब में विवाह करते हैं। इस प्रनियम का किसी भी रूप में उलंघन आपत्तिजनक माना जाता है। कुछ वंशों का आपस में विवाह संबंध निषिद्ध होता है कारण उनका उद्भव एक ही पूर्वजा से माना जाता है। यहाँ के वंशों का बहुधा सामाजिक रूप में स्तरीकरण रहता है और प्रत्येक के अपने कुछ धार्मिक दायित्व होते हैं।

ये पारब्रह्म के एक स्वरूप में विश्वास करते हैं। किन्तु केवल यही शक्ति हर समय संनिहित नहीं रहती। विपत्ति के समय ये कितने ही जातीय एवं स्थानीय देवी देवताओं की अनुकम्पा के हेतु पूजा अर्चना करते हैं। इन दैवी शक्तियों का रूप बहुधा कल्याणकारी और उदार होता है—अतः उनकी कृपादृष्टि के लिए नाना प्रकार की बलि भेंट चढ़ाई जाती है। खासी अपने पूर्वजों की भी पूजा करते हैं। उन्हें भोजन समर्पण किया जाता है। इनका विश्वास है कि जो इन देवी देवताओं की उपेक्षा करता है उसकी यहाँ की अनगिनत प्रेत शक्तियों से कोई रक्षा नहीं कर सकता। कहते हैं ये प्रेत शक्तियाँ उन मनुष्यों की आत्माएं हैं जिनकी अंत्येष्ठि भली प्रकार संपन्न नहीं की गई थी अथवा जिनका अंत किसी प्रचण्ड रूप में हुआ था। ये सब कहीं भ्रमण करती रहती हैं और अधिकतर पहाड़ियों, जलस्रोतों और जंगलों में रहती हैं। इन अपमानित प्रेतों की समुचित पूजा शमन इत्यादि की विधि संपन्न करा देने पर कुछ कष्टों से छुटकारा पाया जा सकता है। ये विधियाँ दैवीकरण द्वारा अण्डे को फोड़ कर अथवा मुर्ग की बलि दे उसके अंतरीय भागों के परीक्षण इत्यादि द्वारा संपन्न की जाती है। ग्राम की पूजा का भार ग्रामपुजारी पर होता है। इसी विधि विधान में कुछ सहायक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुजारी अर्थात "संगौत" भी होते हैं। कभी कभी खासी व्याधियों का कारण जानने के लिए भी 'छवार' अर्थात् पुजारी के पास जाते हैं।

मृत्यु के उपरान्त खासी मृतक की अग्नि क्रिया करते हैं और अस्थियों को 'माओवासा' स्थान पर कुछ काल के लिए विश्रामार्थ रख देते हैं। यह स्थान पिरामिड के आकार का तीन-चार इंच ऊँचा पत्थरों द्वारा बनाया जाता है। इस प्रदेश में आगन्तुकों का ध्यान प्रथम ही यहाँ पर बहुतायत में प्राप्त प्रस्तर स्तंभों की ओर आकर्षित होता है। ये अपने पूर्वजों की स्मृति में इन ऊँचे स्तंभों का निर्माण उनकी अस्थियों के ऊपर अपने वंश की अस्थिधनी अर्थात् "माउटी लैन्ग टिमो" में किया करते थे। बहुधा ये किसी घटना विशेष की स्मृति में भी स्मरण स्तंभ बनाया करते थे किन्तु यहाँ अब इस प्रथा का प्रचार नहीं। अस्थियों को ये अब केवल पत्थरों के ढेर में ही समाधित कर देते हैं।

खासी राज्य का प्रमुख 'सिएम' कहलाता है। वह निर्वाचित परिषद अथवा 'दरबार' के द्वारा शासन-व्यवस्था करता है। कुछ राज्यों के प्रमुख 'लिन्गदोह' अर्थात् 'सरदार' कहलाते हैं। किन्तु इनका स्थान 'सिएम' से कुछ निम्न होता है। इनका प्रमुख कार्य आज्ञाओं और नियमों का प्रतिपालन करना है। यहाँ पर सब मिला कर २५ खासी राज्य हैं। अब इनका संविलयन आसाम प्रान्त में हो गया है। अब यहाँ प्रादेशिक जिला परिषदों की व्यवस्था है जिनका निर्वाचन प्रौढ़ मताधिकार द्वारा होता है। संविधान द्वारा इन परिषदों को अधिकार है कि वे अपने भविष्य का निर्माण स्वयं अपने यहाँ की संस्कृति और परंपराओं के अनुरूप ही कर सकें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिटिल अण्डमान के 'ओन्गे'

लिटिल अण्डमान द्वीप के वासी ओन्गे श्यामवर्णी, छोटे कद, गोल शीर्ष, शिशुवत् नखशिख और घुंडियोर बाल वाले होते हैं। उनके ये बाल सिर पर कुछ कुछ दूरी पर झुरमुट की तरह उगे रहते हैं। लिटिल अण्डमान द्वीप पोर्ट ब्लेयर के ६० मील दक्षिण में स्थित है। यह अण्डमान द्वीपमाला के छोटे बड़े २०४ द्वीपों में सम्मिलित है। द्वीप मालाओं की यह शृंखला हुगली के मुहाने के ६०० मील दूरी से आरंभ हो दक्षिण में सुमात्रा द्वीप की उत्तरी सीमा से ३०० मील दूरी तक विस्तृत है। लिटिल अण्डमान द्वीप में लगभग ३७० वर्गमील भूक्षेत्र संनिहित है। इसकी भूयष्ठि लम्बाई २६½ मील और चौड़ाई सागर के एक किनारे से दूसरे किनारे तक १६ मील है।

अण्डमान द्वीपसमूहों में अनेकों शताब्दि पूर्व से आदिम निवासियों का वास है। इन आदिम निवासियों को उनकी भाषा और संस्कृति के दृष्टिकोण से कुछ समुदायों में बाँटा जाता है। इनमें से दो प्रमुख विभाजन ग्रेट अण्डमान और लिटिल अण्डमान हैं। ग्रेट अण्डमान समूह में जारवा के अतिरिक्त अन्य सभी आदिम जातियाँ आ जाती हैं। जारवा मध्य अण्डमान के पश्चिमी भाग में रहते हैं। ग्रेट अण्डमान के मूल निवासी आज मित्रभावी अण्डमानी कहलाते हैं। यद्यपि अण्डमान की अन्य सभी आदिम जातियों में सबसे अधिक संख्यालु इस जाति का १०० वर्ष के मध्य ही क्षय हो गया है और अब अवशेष केवल २३ व्यक्ति रह गए हैं। लिटिल अण्डमान वर्ग में लिटिल अण्डमान के ओन्गे 'उत्तरी सैन्टिनेल आइलेण्ड' के सेन्टिनेली और जारवा हैं। उत्तरी सैन्टिनेली और जारवा आज भी विदेशियों के लिए शत्रुभावी हैं। अण्डमानी नेग्रिटो जातिवर्ग के हैं। एशिया महाद्वीप के अन्य मानव समूह जो नेग्रिटो वर्ग के हैं अथवा जिनकी तुलना सांस्कृतिक एवं शारीरिक दृष्टिकोण से अण्डमानियों से की जा सकती है इनमें मलाया प्रायद्वीप के 'सेमांग' एवं फिलीपाइन्स के 'अएटा' विशेष हैं।

१८वीं शताब्दि के अंत तक अण्डमान द्वीपसमूहों में यातायात का कोई उपक्रम नहीं किया गया, किन्तु इन द्वीपों तथा यहाँ के निवासियों द्वारा भारतीय जलयानों पर निरंतर आक्रमणों से तंग आकर सन् १७८८ ई० में भारतसरकार ने श्री आरचीबाल्ड ब्लेयर को यहाँ आवास स्थापन के लिए भेजा और पोर्ट-कार्नवालिस पर आवास स्थापित किए। सितम्बर सन् १७८९ ई० में श्री ब्लेयर ने इस आवास को पोर्ट ब्लेयर की संज्ञा दी। इन आवासों को अण्डमानियों के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कठिन विरोध का सामना करना पड़ा। फिर भी आवासीकरण सफल ही रहा। सन् १७९२ ई० में इन आवासों को उत्तर की ओर वर्तमान पोर्ट कार्नवालिस बन्दरगाह में ले जाया गया। दुर्भाग्य से यह स्थान स्वास्थ्य के लिए अत्यंत ही हानिप्रद सिद्ध हुआ और सन् १७९६ ई० में इसे समाप्त कर देना पड़ा। पुनः सन् १८५७ ई० की ग़दर के उपरान्त यहाँ पर ग़दर के दण्डित कैदियों को रखने का निश्चय किया गया। उसके लिए पुराने स्थान को ही चुना गया और उसका नाम पोर्ट ब्लेयर रखा गया। मार्च सन् १८५८ ई० में बन्दियों के निवास की स्थापना की गई और तब से अण्डमान द्वीपसमूह भारत सरकार के शासन में है। फिर भी लिटिल अण्डमान के ओन्गे निरंतर शत्रुभावी बने रहे। विदेशियों के साथ इनकी मित्रता का इतिहास केवल ७३ साल पुराना है। सन् १८८६ ई० में श्री एम. वी. पोर्टमैन के प्रयत्न से ओन्गे विदेशियों के साथ मित्रता का व्यवहार करने लगे। वास्तव में ये लोग इतने वर्षों तक अपने मूल निवास में सबसे पृथक रहे और यही कारण है कि इन पर किसी विदेशी संस्कृति का कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा। आज इनकी कुल संख्या २०० से अधिक नहीं।

ओन्गे अपने मूल निवास में अर्ध खानाबदोशों की स्थिति में हैं। उन्हें भोजन संकलन के लिए निरंतर वर्ष भर इधर उधर भटकना पड़ता है। उनके इस अनिवार्य भ्रमण का ही परिणाम है कि इन्होंने अपने रहने के लिए किसी प्रकार के स्थायी निवास अथवा ग्रामों का विकास नही किया। चाहे वह समुद्र तट पर हो अथवा घने बनों के मध्य—उनके दो प्रकार के आश्रय मिलते हैं। इनमें से स्थायी कहे जाने वाले समुदाय कुटीर 'बेरा' कहलाते हैं और अस्थायी प्रकार के 'कोराले'। वास्तव में समुदाय कुटीर ही इनके रहने के प्रमुख स्थान हैं जहाँ ये वर्षा की लम्बी अवधि में रहते हैं और जहाँ सामाजिक जीवन के सभी विशेष कार्यक्रम संपन्न किए जाते हैं। ओन्गे कुटीर के मध्य ही शयनमंचों के नीचे अपने शव दफनाते है। इनके ये कुटीर उल्टे प्याले के आकार के अर्ध गोलाकार होते हैं। ये चारो ओर बेंत की पत्तियों से छाई ओलती से ढके होते हैं। ओलती ढलवाँ भूमि की ओर झुकी हुई लगभग उसका स्पर्श करती हुई सी बनी होती हैं। इसी ढलवाँ ओलती में एक ओर प्रवेश द्वार होता है। इन ओलतियों को अन्दर से किसी भी ओर हवा आने के लिए उठाया जा सकता है। कुटीर के अन्दर मध्यस्थल के चारो ओर शयन के लिए लकड़ी के मंच बनाए जाते हैं। मध्य का स्थान अग्नि और नृत्य के लिए छोड़ दिया जाता है। अस्थाई प्रकार के कोराले कुटीर ग्रीष्म में खुले स्थानमें बनाये जाते हैं और इसके मध्य भी अग्नि और नृत्य के लिए स्थान छोड़ दिया जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओन्गे कृषि कर्मकला नहीं जानते। उन्हें जीवन निर्वाह के लिए वन और सागर के प्राकृतिक साधनों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। सागर से उन्हें डूगोन्ग (हस्तिमकर प्रजाति), कछुए, नाना प्रकार की मछलियाँ, केकड़े, झींगा, चिंगड़ी तथा अन्य जलजीव मिलते हैं। मछलियों और केकड़े द्वीपमाला के चारो ओर की खाड़ियों में होती हैं। किन्तु ताज़े पानी की मछलियाँ और चिंगड़ी द्वीपमाला के जलस्रोतों से दूर वहुतायत से मिलती हैं। जंगलों से इन्हें जंगली शूकरों का मांस, मधु, वन्स्पति, शाक सब्जी, जड़, मूल, फल, कन्द, वीज इत्यादि प्राप्त होते हैं।

सुअर का शिकार ओन्गे धनुष वाण और भाले से करते हैं। सुअर का पीछा करने के लिए कुत्ते छोड़ दिए जाते हैं। वे उन्हें हड़का कर किसी खाड़ी (विदर) अथवा झाड़ी की ओर ले जाते हैं, जहाँ से वे और कहीं भाग न सकें। यहाँ उन्हें भाले से अथवा वाण से बींध कर मार दिया जाता है।

मछली पकड़ने के लिए भी पुरुष धनुष वाण का प्रयोग करते हैं। स्त्रियाँ तिनकों से निर्मित हस्तजालों का प्रयोग करती है। कछुओं तथा डूगोंग का शिकार खात् नौकाओं में बैठ कर हारपून द्वारा किया जाता है। इनकी नौकाओं का अगला तथा पिछला हिस्सा खोद कर इस प्रकार सपाट बनाया जाता है कि उस पर आसानी से खड़े होकर हारपून से निशाना लगाया जा सके।

यहाँ काठ की वाल्टियों में मधु इकट्ठा किया जाता है। मधुमक्खियों के छत्ते वाले पेड़ पर चढ़ने के पूर्व ये टोनयागे पेड़ की पत्तियाँ मुख से चवा कर उन्हें अपने शरीर पर मल लेते हैं। इन पत्तियों की गन्ध से मधुमक्खियाँ भाग जाती हैं। अपने मुख में कुचली पत्तियों को भर कर व्यक्ति पेड़ पर चढ़ जाता है और उनके छत्ते पर यह सब थूक देता है। इससे मक्खियाँ अकर्मण्य हो कुछ कर नहीं पातीं और पेड़ से छत्ता सहज ही तोड़ लिया जाता है। हाथों से छत्ते को दवा कर मधु निकाल कर वाल्टियों या शीशे की बोतलों में भर लेते हैं। ये बोतलें इन्हें वहुधा समुद्रतट पर लहरों की थपेड़ों से प्राप्त होती हैं। आज कल ये लोग मधु की बोतलों का आगन्तुकों से तम्बाकू इत्यादि वस्तुओं द्वारा विनिमय करते हैं। छत्ते के मोम का प्रयोग घास के तन्तुओं, मछली के जाल तथा लकड़ी के बर्तनों को पक्का और दृढ़ बनाने के लिए करते हैं।

ओन्गे कन्द, मूल, कटहल, मछलियाँ इत्यादि भोजन आग पर रख कर पकाते हैं। मोटे किस्म के कन्द, सुअर तथा कछुए का मांस ये पानी में उबाल कर भी खाते हैं। इसके लिए इन्हें टीन या अलमोनियम के कनस्टर विदेशियों द्वारा प्राप्त होते हैं। इनका अन्य एक भोजन पकाने का ढंग भाप द्वारा उबालने और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अग्नि पर सेंकने का मिश्रित है। लकड़ी के लठ्ठों को आग में जला कर अंगार तय्यार किए जाते हैं फिर उन पर कोरल (मूंगा) पत्थर रख कर उन्हें तपा लिया जाता है। उपरान्त इन कोरल पत्थरों पर किसी प्रकार के पत्ते शीघ्रता से बिछा कर उन पर सुअर अथवा कछुए के मांस के टुकड़े या कटहल इत्यादि रखते हैं। फिर हरे पत्तों से मांस को ढक कर संपूर्ण को (मांस तथा अग्नि इत्यादि) गीली मिट्टी से भली भाँति थाप देते हैं ताकि कहीं से भाप न निकल पाए। लगभग ४-५ घण्टे तक हरे पत्तों की भाप और पत्थरों को इसी प्रकार रहने देते हैं। इस प्रक्रिया से भोजन भली प्रकार पक जाता है। अतिरिक्त मांस ये काठ के मंच के ऊपर ऊँचे स्थान पर रख देते हैं ताकि कुत्ते उसे न पा सकें। इस मंच के नीचे सदैव आग जलती रहती है। बहुधा यह मांस तीन चार दिन से अधिक नहीं रखा जाता। चार दिन के उपरान्त भी यदि कुछ अवशेष रह जाता है तो उसे फेंक दिया जाता है। धुंऐं पर तपा कर खाद्य पदार्थों को अधिक दिनों तक संचित रखने की कला इन्हें ज्ञात नहीं। ये केवल कटहल के बीज संग्रहित कर रखना जानते हैं। इन्हें ये जाल में बांध कर जलस्रोतों में डाल देते हैं। वर्षा ऋतु में जब कि और कुछ भोजन या शाक नहीं मिलते, उस समय ये इन्हें ही जल से निकाल कर खाते हैं।

पुरुष पेड़ की छाल से अपने अंग ढकते हैं। स्त्रियाँ कमर के चारो ओर छाल निर्मित कमरबन्द के सहारे सामने बेंत के महीन तंतुओं से निर्मित घास के गुच्छ पहिनती हैं। इनके अतिरिक्त ओन्गे की और कोई वेष भूषा नहीं। आजकल इन्हें पोर्टब्लेयर से अथवा विदेशियों द्वारा कुछ वस्त्र खंड भेंट में मिल जाते हैं। पुरुष इन्हें अपने अंग ढकने के लिए कमर से बांध कर पैरों के मध्य पहिनते हैं।

डेन्ड्रोवियम (जीवन्ति प्रजाति) की पतली पट्टियों से प्रयोग की अन्य वस्तुओं जैसे बाल्टी, धनुष, बाण इत्यादि को सजाया जाता है। कमर पर पहिनने वाले कमरबन्द भी इसी से सजाते हैं।

अण्डमान की अन्य आदिम जातियों की भाँति ही ओन्गे का भी अग्नि अर्जन का अपना ढंग है। आजकल ये पोर्टब्लेयर अथवा विदेशियों से दियासलाई लेकर आग बनाते हैं। ये अपने निवास स्थलों में तथा भ्रमण के समय विशेष रूप से चुनी गई लकड़ी जला कर अग्नि प्रज्वलित रखते हैं। धुऐं से भरो अग्नि ये हाथ में ले एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं।

ऐसा लगता है कि बहुत दिनों से ओन्गे मिट्टी के बर्तन बनाने की कला भूल गए हैं। इस द्वीप में कहीं भी मिट्टी के बर्तन नहीं मिलते। कोमल काठ के पेड़ों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

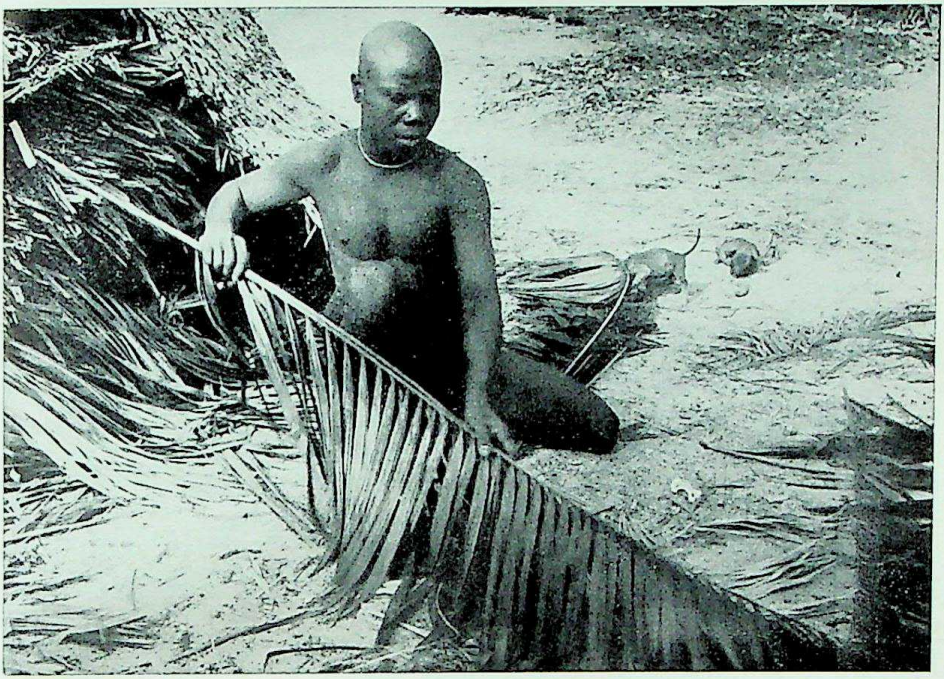

भग्न कुटीर के निर्माण हेतु बेंत के पत्तों को तय्यार करता हुआ एक ओन्गे पुरुष।
लिटिल अण्डमान द्वीप, अण्डमान द्वीप समूह।

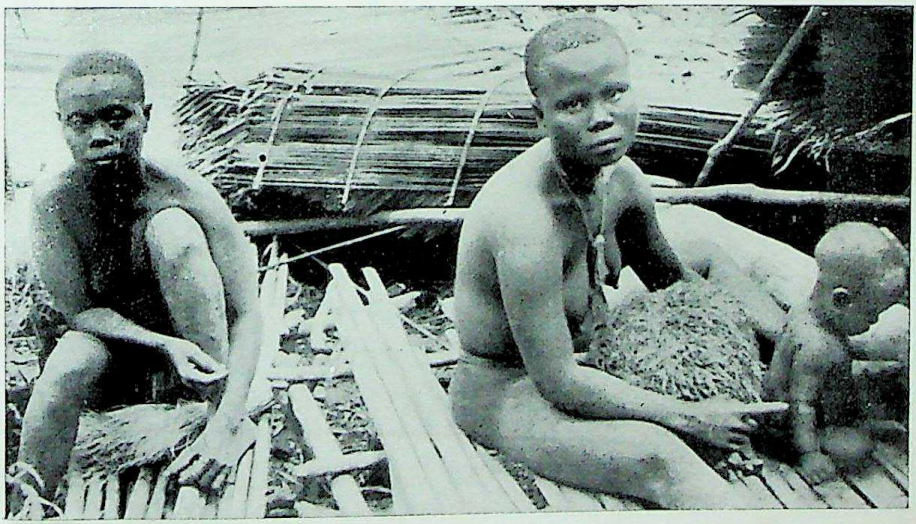

ओन्गे स्त्रियां और शिशु।
लिटिल अण्डमान द्वीप, अण्डमान द्वीप समूह।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation Chandigarh

ओन्गे शरीर पर मिट्टी से चित्र प्रसाधन।
लिटिल अण्डमान द्वीप, अण्डमान द्वीप समूह।

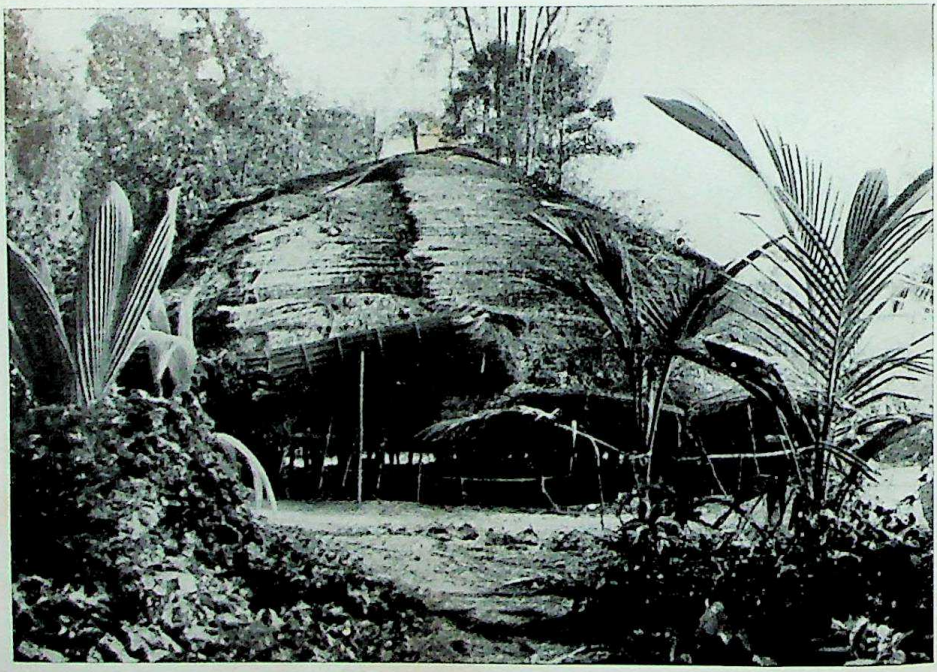

ओन्गे समुदाय कुटीर।
लिटिल अण्डमान द्वीप, अण्डमान द्वीप समूह।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से लकड़ी लेकर उसे छेनी के प्रकार की तक्षणी से खुरच कर खोखला कर लकड़ी की बाल्टी बनाई जाती हैं। इन बाल्टियों को बाहर की ओर अग्नि में झुलसा लेते हैं और अन्दर की ओर मधुमक्खी के मोम से पोतते हैं। विशाल बांस खण्डों से पानी रखने के बर्तन बनाए जाते हैं। ये बाँस खण्ड समुद्र की लहरों में बह कर तट पर आ लगते हैं। पेड़ों की सूखी छाल के बड़े बड़े टुकड़े भोजन रखने के थाल का काम देते हैं। नोबिलस शंख (Nawbilus shell) से ये पानी पीने का काम लेते हैं। आजकल कुछ अलमोनियम के बर्तन जैसे सॉसपैन, मग इत्यादि भी यहाँ प्रयोग में लाए जाते हैं इन्हें ये पोर्टब्लेयर अथवा विदेशियों से प्राप्त करते हैं।

लिटिल अण्डमान में दो प्रकार की टोकनी बनाई जाती हैं। इनमें से छोटे प्रकार की 'टोलिओआगा' अधिक कुशलता और सुन्दरता से बनाई जाती हैं और बड़ी अर्थात 'टोलेलाया' अधिक ध्यान से नहीं बनाते। वह अधिक समय तक नहीं रहती। किन्तु दोनों ही पेंदे में गोल और बाँस की बनाई जाती है।

खात् (कैनो) नौकाओं का प्रयोग ओंगे यात्रा, पर्यटन, कछुए और डूगोंग का आखेट इत्यादि के करने में करते हैं। लिटिल अण्डमान की कैनो लकड़ी में खुदाई कर बनाई जाती हैं। उसमें एक दंड अर्थात् आउटरिगर रहता है और पतवार या बाँस के द्वारा खेई जाती है। बहुधा ओन्गे अपनी इन्हीं छोटी खात् नौकाओं के द्वारा पोर्टब्लेयर तक की लम्बी समुद्री यात्राऐं कर लेते हैं।

ओन्गे शीशे के टुकड़ों से शिर का क्षुरण (मुण्डन) करते हैं। शीशे के टुकड़े भी इन्हें लहरों द्वारा प्राप्त होते हैं। समुद्र में फेंकी गई बोतलें टूट फूट कर किनारे आ लगती हैं। केश क्षुरण का कार्य केवल स्त्रियाँ करती हैं। स्त्रियाँ और पुरुष दोनों ही समान रूप में सिर घुटा लेते हैं। दोनों ही श्वेत मिट्टी और गेरु को सुअर की चर्बी में घोल कर शरीर पर चित्रकारी करते हैं। उनका विश्वास है कि श्वेत मिट्टी उनके शरीर की कीड़ों के काटने से रक्षा करती है और लाल गेरु तो एक प्रकार की औषधि का ही काम देती है। ज्वर होने पर इससे लाभ होता है। किन्तु शोक के समय लाल मिट्टी से शरीर पर चित्रण निषिद्ध होता है।

ओन्गे की कुल जनसंख्या लगभग २०० है। इनके ५ से लेकर १५ परिवारों के झुण्ड एक साथ एक आवास से दूसरे आवास में भ्रमण करते रहते हैं। इनके संपूर्ण परिवारों को ४ बड़े समूहों में बाँटा जा सकता है। प्रथम समूह द्वीप के उत्तर पूर्व की तटभूमि पर रहने वाले परिवारों का है। इन्हें 'गीरेमेका-गोबेनले' कहते हैं। दूसरा समूह अंतराल के कुटीरों का है। इन्हें 'एन्गाक्वाले' कहते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। तीसरा समूह 'गीरेरारा गोबेनले' है। ये दक्षिणी पश्चिमी तट पर रहते हैं। इनमें से प्रथम दो समूहों में परस्पर एक्य भाव रहता है। किन्तु तीसरा अर्थात् दक्षिण-पश्चिम वाला समूह दोनों के ही निकट नहीं।

ओन्गे परिवार में पति पत्नी और उनके बच्चे सम्मिलित रहते हैं। एक परिवार में औसत सदस्यों की संख्या ३.०६ रहती है। इस बात को मानना पड़ता है कि कुछ दिनों से ओन्गे जनसंख्या क्षीण हो रही है। यहाँ पर स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम है और उसमें भी बहुत सी विधवाऐं सम्मिलित हैं। ओन्गे परिवार में ऐसे परिवार का बड़ा सम्मान होता है जिसमें स्त्री व पुरुष के पारस्परिक संबंध स्थाई रहे हों। उनका संबंध आर्थिक एवं यौन दोनों ही रहता है। यहाँ पुरुष का स्त्री पर यौन एकाधिकार होता है एवं भोजन प्राप्त करने तथा उसे तय्यार करने के संबंध में दोनों का प्रायः समानाधिकार रहता है। इनके यहाँ विवाह संबंध आपस के कुछ विशेष संबंधियों में होते हैं। यह प्रायः प्रगट है कि कुछ संबंधियों में विवाह संबंधी निषेधों का बड़ी कट्टरता से पालन किया जाता है। बच्चों का पालन पोषण बहुधा माता पिता द्वारा ही होता है। यद्यपि ऐसे भी बहुत से उदाहरण मिलते हैं जहाँ पर संबंधी बच्चों को गोद ले लेते हैं और स्वयं उनका पालन पोषण करते हैं। गिरेमे-कागोबेनले तथा एन्गाक्वाले समूह के परिवारों में परस्पर मैत्री भाव होने के कारण इनमें आपस में विवाह संबंध अधिकता से होते हैं। इन समूहों के कुछ सदस्य अपने निवास भी सदा के लिए एक दूसरे समूह में बदल लेते हैं। किन्तु ऐसे संबंध दक्षिणी पश्चिमी तट के निवासियों के साथ प्रायः बहुत कम हुए हैं।

इस द्वीप में कोई संगठित शासन सत्ता नहीं दिखाई देती, परन्तु इनके भिन्न समूहों के मामले वहाँ के प्रत्येक समुदाय के वृद्धजन द्वारा चलाए जाते हैं। आखेट भूमि पर सबका समान अधिकार होता है, हाँ कटहल के पेड़ों और मधु-मक्खियों के छत्तों पर व्यक्तिगत अधिकार संभव है। यद्यपि आखेट में हत पशुओं और प्राप्त जड़ मूलों पर व्यक्तिगत अधिकार होता है तथापि इन वस्तुओं को उन लोगों में बांटा जाता है जिनके पास खाने को कुछ भी न हो। इन खाद्य वस्तुओं के लिए यदि कोई दूसरा समुदाय अनुरोध करे तो उसे भी कभी टाला नहीं जाता। अतिथि का सदैव स्वागत किया जाता है। अमित्र वर्ग के अस्थाई अतिथियों की भी अच्छी आवभगत की जाती है। वस्तुओं का आपस में आदान-प्रदान विनिमय प्रणाली द्वारा होता है। यहाँ पर श्रम विभाजन केवल यौन अर्थात् स्त्री पुरुषों से संबंधित होता है। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपने यंत्र बनाने और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्हें ठीक से रखने की योग्यता रखता है फिर भी कुछ ऐसे कुशल कलाकार होते हैं जो खात् नौकाऐं एवं छाल के रेशों की रस्सियां बनाते हैं।

इनके मनोरंजन की प्रक्रियाऐं विशेष कर नृत्य और गान हैं। बहुधा ओन्गे नृत्य-गान में लीन रहते हैं। प्रायः प्रत्येक क्रियाकलाप और अवसर के इनके पृथक गीत होते हैं। बहुधा पुरुष अपने विश्राम के अवसर में धनुषबाण द्वारा निशानेबाजी के खेल खेलते हैं। छोटे लड़के सदैव धनुषबाण लिए रहते हैं और वे आखेट तथा हारपून द्वारा मछली मारने के खेल खेलते हैं और लड़कियाँ किसी न किसी प्रकार के नृत्य के पदचालन करती दिखाई देती हैं।

ओन्गे के धर्म अथवा अंध विश्वासों आदि से संबंधित विषयों के संबंध में अभी तक कोई सूचना नहीं मिलती। फिर भी यह प्रगट है कि वे कुछ प्रेत शक्तियों में विश्वास करते हैं जो उनके परिवार और द्वीप पर नाना प्रकार की मुसीबतें ले आती हैं। उनका विश्वास है कि मृत जन प्रेत बन जाते हैं और पुनः द्वीप में प्रवेश करते हैं। वे शव अपने समुदाय कुटीर में शयनमंचों के नीचे समाधिस्थ करते हैं। कुछ विशिष्ट अवधि के उपरान्त मृत व्यक्ति की विधवा या उस विधवा का निकट संबंधी अथवा भाई उसके जबड़े की हड्डी को गले में धारण करता है।

वर्तमान युग में ओन्गे पहिले की तरह सबसे अलग थलग नहीं। कुछ वर्षों से सरकारी कर्मचारीगण यहाँ आते जाते रहते हैं और ओन्गे स्वयं भी कभी कभी पोर्ट ब्लेयर आते हैं। इससे उन्हें वाह्य जनों के साथ संस्पर्श के अवसर मिले हैं। इससे उनका वाह्य वस्तुओं और तरीकों की ओर ध्यान आकर्षित हो रहा है। अभी तक उनकी भाषा के कोई दुभाषिए नहीं मिलते अर्थात् उनकी भाषा कोई नहीं समझता। हाँ, कुछ ओन्गे व्यक्तियों ने हिन्दुस्तानी भाषा के कुछ शब्द सीख लिए हैं। ओन्गे भाषा अण्डमानी भाषा समूह की है, जिसका भारत महाद्वीप के भाषा परिवारों के साथ कोई संपर्क नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चेन्चू

चेन्चू हैदरावाद की अर्ध खानाबदोश जाति है। ये महबूब नगर जिले के पहाड़ी आमिराबाद की उच्चभूमि में रहते हैं। नालगोन्डा जिले में इनके छिटके हुए निवास मिलते हैं। मद्रास प्रान्त में भी कुछ चेन्चू पाए जाते हैं।

अतीत काल में चेन्चू पूर्ण खानाबदोश थे। आज यद्यपि इनके स्थाई ग्राम मिलते हैं तथापि इनकी खानाबदोशी आदतों का पूर्ण तरह से निर्मूलन नहीं हुआ है। ये सरलापल्ली, रायलेट तथा पूलाज़ेल्मा ग्रामों में स्थायी रूप से रहते हैं। प्रायद्वीप के दक्षिणी पश्चिमी भाग के चेन्चू भ्रमणशील हैं। इस क्षेत्र के ऐसे स्थानों में जहाँ पर जल एवं पेड़ पौधे मिलने की सुविधा है, इन्होंने अपने अच्छे घर बना लिए हैं। किन्तु कुछ ऋतुओं में ये अपने इन घरों को छोड़ देते हैं और जंगलों में अस्थाई आश्रय बना कर रहते हैं। वर्षा और शरद् ऋतु में ये अपने घरों में रहते हैं किन्तु मार्च माह में ग्रीष्म के आरंभ होते ही महुआ फूलने के समय ये महुए के फूलों का अनुसरण कर वनों में चले जाते हैं।

चेन्चू अस्त्राल वर्ग के हैं। सन् १९४१ ई० की जनगणना के अनुसार महबूब नगर एवं मद्रास प्रेसीडेन्सी में इनकी जनसंख्या क्रमशः ३२८० और ९००३ है। इनका कद मझोला, रंग गहरा भूरा, शीर्ष लम्बा, आँखों की भौंहें उभरी हुई, नाक चौड़ी तथा ऊपर नासामूल चिपटी होती है। इनके शिर के बाल भिन्न प्रकार के अर्थात् लहराले से लेकर घुंघराले तक होते हैं, पर वे कुंचित या झबरीले नहीं होते।

उनके शरीर की स्वच्छता पानी की प्राप्ति पर निर्भर करती है। जहाँ पानी अच्छी तरह से मिलता है वहाँ चेन्चू सफाई से स्नान करते हैं—और अपने को स्वच्छ रखते हैं। किन्तु जहाँ पानी का अभाव है—वहाँ वे बहुधा इस ओर ध्यान नहीं देते और गन्दे रहते हैं। ये अपने बालों की भली प्रकार देख भाल करते हैं। माह में ये इन्हें एक बार धोते और चिकना रखने के लिए घी लगाते एवं लकड़ी की कंघी से काढ़ते हैं। पुरुष अधिकतर लम्बे केश रखते और शिर, पीठ अथवा शिर के किनारे की ओर जूड़ा बनाते हैं। स्त्रियाँ बीच की मांग निकालती तथा गर्दन के पिछले भाग में उन्हें उमेठ कर जूड़ा बनाती हैं।

पुरातन काल में चेन्चू वनपल्लव पहिना करते थे किन्तु आजकल बाजार से अथवा सौदागरों से कपड़ा खरीदते हैं। पुरुष कमर पर तृण से उमेंठ कर बनाई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुई डोर पहिनते हैं और लगभग ५-६ इंच चौड़ा कपड़ा जाँघों के मध्य ले जाकर कमर के दोनों ओर बांधते हैं। शीतकाल में शरीर को ढकने के लिए ये कपड़ों का प्रयोग करते हैं। कुछ पुरुष कपड़े की पगड़ी भी बांधते हैं। स्त्रियाँ साड़ी चोली अथवा ब्लाउज पहिनती हैं।

पहिले जंगल में प्राप्त वस्तुओं से ही आभूषण बनाए जाते थे। स्त्रियाँ बहुत प्रकार के बीजों को सुखा कर उन्हें किसी लता की डोर में पिरो कर माला बनाती थी। पुरुष मोर पंखों से गला सजाते थे। कलाईबन्द और बाजूबन्द लचकदार तन्तुओं से बनाए जाते थे। आज इस प्रकार की वन उपज नहीं मिलतीं, अतः मोती, मूंगा, सीसे तथा श्वेत धातु के आभूषण आजकल पहिने जाते हैं। इन्हें सौदागरों से खरीदा जाता है। स्त्रियाँ धातु से बनी चूड़ियाँ और कर्णफूल पहिनती हैं। बच्चों के गलों में भी मोती मूंगों की कुछ मालाएं रहती हैं। पुरुषगण बहुत कम आभूषण पहिनते हैं। वे केवल कानों में ही बालियाँ पहिनते हैं।

चेन्चू की भौतिक संस्कृति के अवयव बहुत साधारण होते हैं। खन्ती इनका सबसे प्रमुख यंत्र है इसके बिना इनका काम नहीं चल सकता। ये इससे कन्दमूल इत्यादि खाद्यपदार्थ खोद कर निकालते हैं। इनके आखेट के यंत्र धनुष बाण तथा बन्दूकें हैं जिन्हें ये मैदानों से खरीदते हैं। चेन्चू सदैव कुल्हाड़ी लेकर अपने ग्राम से बाहर जाते हैं। इससे ये जंगल में लकड़ियाँ काटते और अनावश्यक पेड़ पौधे उखाड़ फेकते हैं। सीधे फलक का चाकू ये बाँस काटने के काम में लाते हैं। इनकी कुल्हाड़ी और चाकू विदेशी वस्तुऐं हैं। घर में प्रयोग के बर्तनों में विशेष काठ के चमचे, मिर्च कूटने की मूंगरी (मूसली) और खाना खाने के लिए लकड़ी की चपटी तश्तरियाँ होती हैं। ये नमक धरती में जमा करते हैं और बाँस से निर्मित पात्रों से जंगलों की उपज की नाप तौल का काम लेते हैं। करण्ड कार्य इनका प्रमुख घरेलू धन्धः है। बहुधा इनकी चीजों की खपत मैदानी बाजारों में होती है। गोल छिछली डलियों में ये फल सुखाते है। महुए के फूल सीधी गोलाकार बाल्टियों में इकट्ठा करते हैं। मधु (शहद) इकट्ठा करने के लिए महीन तन्तुविन्यास की बनी बाल्टियाँ होती हैं।

श्रृंगार की चीज़ों में विशेष लकड़ी के कंघे और चपटी लकड़ी के टुकड़े जुएं मारने के लिए होते हैं। संगीत के यंत्रों में विशेष बाँसुरी, ढोल तथा पैनपाइप (तुरही) हैं। पैनपाइप यह अच्छा बड़ा बाजा होता है। इसे नरकुल तथा छोटी तुम्बी से बनाया जाता है।

इनके निवास स्थाई एवं अस्थाई दोनों प्रकार के होते हैं। इनके घर धरती पर गोलाकार दृढ़ भीत्ति के, ऊपर की ओर शन्क्वु आकार के छप्पर छाए हुए केवल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक द्वार वाले होते हैं। इन्हें बनाने के समय व्यक्ति के निकट संबंधी और मित्रगण उसकी सहायता करते हैं। अस्थाई निवास छोटी घास की झोपड़ियां होती हैं। इनमें दीवाल नहीं होती। ये झोपड़ियाँ कुछ ऐसी डालियों और पत्तों से बनाई जाती हैं कि वे हरे भरे होने तक ही धूप और पानी से साधारण रक्षा करते हैं।

इनका जातीय अर्थ बहुधा आखेट और खाद्य संकलन है। इनमें से कुछ लोग भारतीय अनाज जैसे मक्का, ज्वार बाजरा और मिर्च की खेती करते हैं, किन्तु पैदावार प्रायः नहीं के बराबर होती है। वे वन से खन्ती द्वारा कन्दमूल खोद कर टोकनियों में इकट्ठा कर लाते हैं। फलों में विशेष भिन्न प्रकार की झर-बेरियाँ, आम, गूलर और इमली हैं। इसके अतिरिक्त जड़ी बूटियाँ भी खाने के पदार्थ हैं। महुआ के फूल अधिकता से इकट्ठे किए जाते हैं। इन्हें ऐसे ही खाया भी जाता है और आसवन विधि से इनसे मदिरा भी तय्यार की जाती है। भोजन संकलन के कार्य में स्त्री पुरुषों के कार्यों में कोई बटवारा नहीं होता—हाँ, मधु इकत्र करने का कार्य केवल पुरुषों का होता है। मधु निकालने में पुरूष अपूर्व कुशलता का प्रदर्शन करते हैं। मधुमक्खियाँ अधिकतर चट्टानों पर छत्ते बनाती हैं। दो तीन आदमी एक साथ मिल कर मधु इकट्ठा करने जाते हैं। चट्टानों को मापते हुए उनके मुख तक पहुँच कर छत्ते को पाने के लिए लम्बी रस्सियों का प्रयोग किया जाता है और फिर लोहे के चाकू अथवा लकड़ी के चपटे फलक से छत्ते को काटते हैं। एक दूसरा रोचक ढंग तीर में डोरी बाँध कर दूर स्थित छत्तों को बींधने का है। तीर को छत्ते में भोंक देते हैं और मधु डोरी के सहारे बहने लगता है उसे नीचे टोकरी में इकट्ठा कर लेते हैं।

ये चिड़ियों तथा दूसरे छोटे पशुओं—जैसे खरगोश, गिलहरी, बंदर इत्यादि का आखेट धनुष बाण से करते हैं। बड़े पशु जैसे हिरन, बारहसिंघा, चीता, तथा शेर का शिकार बन्दूक से किया जाता है। कभी कभी गिलहरी और चिड़ियाँ गुलेल से कंकड़ी मार कर भी मारते हैं। चेन्चू भालू, खरगोश, गिलहरी, जंगली बिल्ली, मूर्गियाँ, बतखों एवं छोटी चिड़ियों का मांस खाते हैं। चीटियाँ भी ये बड़े स्वाद से खाते हैं। ये डोरी के जाल या पिंजड़े इत्यादि का प्रयोग कर आखेट कभी नहीं करते।

जहाँ पर सुविधा होती है मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यदि ग्रामसीमा के अंतर्गत कोई नदी या तालाब नहीं होता तो ये मछली पकड़ने कहीं बाहर नहीं जाते। छिछले पानी के तालाबों में विषैली घास (मन्डूरिया सुबेरिस) द्वारा पानी को विषाक्त कर मछलियाँ मारी जाती हैं। विष से जड़-शून्य मछलियाँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फिर ये हाथ से ही पकड़ लेते हैं। यहाँ बंसी और कांटें का प्रयोग अभी कुछ ही दिनों से आरंभ हुआ है।

पालतू पशुओं में गाय भैंस व बकरियाँ हैं। इनके दूध से अनेक प्रकार के खाद्य तय्यार किए जाते हैं—और बकरों का मांस खाया जाता है। मुर्गी पालन यहाँ बहुत कम होता है यद्यपि ये मुर्गी और अण्डा खाते हैं। कुत्ते प्रायः हर गाँव में मिलते हैं। ये गाँव के प्रहरी का काम करते हैं।

यहाँ कृषि का ढंग साधारण है। कृषि के लिए छोटे छोटे भूमि खंड चुन लिए जाते हैं और लकड़ी की खूटियों द्वारा मिट्टी खोदी जाती है। उपरान्त खन्ती द्वारा छोटे गढ़े बना कर प्रत्येक गढ़े में कुछ बीज बोकर उन्हें मिट्टी से ढक देते हैं।

व्यापार यहाँ बहुधा बाजार में अथवा सौदागरों द्वारा होता है। इनसे ये कपड़े, घर के प्रयोग के सामान, कुल्हाड़ी व खन्ती के लौहशीर्ष तथा नुकीले शिरे खरीदते हैं। वे टोकरियों से ज्वार बाजरा का विनिमय करते हैं। इन्हें श्रमिक के कार्य करने से बहुत कम आय होती है। जो लोग बैलगाड़ी के रास्ते के समीप रहते हैं—केवल उन्हें ही वनविभाग में जंगलों को काट कर सड़कें बनाने के काम में लगाया जाता है। पारिश्रमिक में इन्हें एक दिन में तीन पाव ज्वार बाजरा मिलता है।

इनका सामाजिक विन्यास साधारण परिवारों, स्थानीय वर्गों एवं ग्राम समुदाय से बनता है। परिवार में पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे रहते हैं। ग्राम समुदाय में वे सब लोग सम्मिलित रहते हैं जिनके स्थाई निवास होते हैं और उसके साथ ही जिनका किसी भूमि खण्ड पर समान अधिकार होता है। स्थानीय समूह से तात्पर्य उन परिवारों से होता है जो कुछ समय तक उस आवास में रहे हों।

विवाह बहुधा लड़के लड़की की पसन्द के होते हैं। यहाँ मामा फूफी की संतान के आपस में विवाह (cross cousin marriage) प्रचलित हैं। इसके अतिरिक्त बातचीत के द्वारा भी विवाह निश्चित किए जाते हैं। किसी लड़की का चुनाव हो जाने पर लड़का अपने माता पिता से विवाह करने के लिए कहता है। इस पर लड़के के माता पिता लड़की के माता पिता से मिलकर उनकी अनुमति ले लेते हैं। यदि वे तय्यार हो गए तो विवाह की तिथि निश्चित कर ली जाती है। वर के माता पिता वधू के लिए एक साड़ी और ब्लाउज़ (चोली) खरीदते हैं। विवाह के दिन वर, उसके संबंधी, मित्र और ग्रामप्रमुख सभी मिल कर वधू के घर जाते हैं। वे अपने साथ चावल, महुआ और मदिरा की भेंट ले जाते हैं। वधू के परिवार के लोग उनका स्वागत करते हैं, और एक दूसरे का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अभिवादन करते हैं। वर साड़ी और ब्लाउज़ वधू की माँ को सौंप देता है। वधू नए वस्त्र धारण करती है और फिर इन दोनों परिवारों के प्रमुख विवाह संपन्न कराते हैं। दोनों से ही पूछा जाता है कि वे पति पत्नी बनने के लिए प्रस्तुत हैं या नहीं। उपरान्त विवाह भोज होता है और रात में बहुत देर तक खान-पान, गान और नृत्य चलता रहता है। दूसरे दिन प्रातः बारात वधू को लेकर वापिस आ जाती है। यहाँ पर वर वधू अपना नया घर बनने के समय तक यहीं माता पिता के साथ रहते हैं। उपरान्त नए घर में चले जाते हैं।

यहाँ छोटे लड़कों के मनोरंजन के विशेष साधन धनुष और वाण हैं। लड़कियों के कोई खिलौने नहीं होते। वे लकड़ी के टुकड़ों और गुट्टों से गुड़ियों के खेल खेलती हैं। युवा जन गा बजा कर अपना मन बहलाते हैं। नृत्य सामाजिक संगम होता है। ये विवाहों और महुआ के फूलों के चयन के समय नाचते हैं।

उत्तराधिकार के नियम यहाँ सामाजिक एवं व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार के हैं। संपूर्ण ग्रामसमुदाय का एक विशेष भूमिखण्ड पर सम्मिलित अधिकार होता है। अतः भूमि पर किसी का व्यक्तिगत स्वत्व नहीं होता। हाँ, व्यक्तिगत् संपदा जैसे कुल्हाड़ी, चाकू, खन्ती तथा अन्य छोटी मोटी चीज़ें पुत्रों को उनकी आवश्यकता के अनुसार बाँट दी जाती हैं। माता पिता के यहाँ से प्राप्त स्त्री के आभूषण पुत्रियों को दे दिए जाते हैं। हाँ, यदि पुत्रियाँ न हों तो वे पुत्रों को मिल जाते हैं। पशु और मकान इत्यादि पुत्रों को मिलते हैं।

यदि कोई चेन्चू सामाजिक नियम तोड़ता है तो वह बिरादरी (ग्राम-समुदाय) के विशिष्ट जनों को भोज देकर प्रायश्चित कर सकता है। पेडामान्छी संपूर्ण ग्रामसमुदाय के प्रमुख का कार्य करता है। गुरुजनों की सभा और पेडा-मान्छी मिल कर समस्त झगड़ों का फैसला करते हैं। यही सभा आपसी लड़ाइयों और व्यभिचार के मामले भी देखती है। अपराधी को सभा के सदस्यों को मदिरा-पान कराना पड़ता है।

चेन्चू अपने भेषज ज्ञान द्वारा विभिन्न व्याधियों और बीमारियों को अच्छा करते हैं। पेट की पीड़ा में जड़ी बूटियाँ दी जाती हैं। शिर में दर्द होने पर एक प्रकार की लता में आग लगा कर उसेसे माथा दाग दिया जाता है। यदि किसी व्याधि की दवा उनकी सूझ के परे हो तो वे उसे किसी प्रेतशक्ति की अवकृपा समझ लेते हैं। ऐसी व्याधियाँ वे दैवीकरण द्वारा ठीक करते हैं। रोगी के स्वस्थ हो जाने पर उस प्रेतात्मा को विशेष पूजा भेंट की जाती है। यहाँ मृत शव को दफनाते हैं—पर अब कुछ दिनों से शवदाह भी प्रचलित हो गया है। मृत्यु के थोड़े समय के उपरान्त क़बरिस्तान में शव दफना देते हैं। ये किसी सुविधाजनक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थान में अस्थाई रूप में ढकी हुई जगह में शव गाड़ देते हैं—और फिर उसे घर कभी वापिस नहीं लाते। शव को उसके अपने ही कपड़े पहिनाए जाते हैं। उसका शिर दक्षिण-पश्चिम की ओर, चेहरा पूर्व की ओर, और पैर उत्तर-पूर्व की ओर रखते हैं। क़ब्र को मिट्टी से पूर देते हैं और उसके ऊपर पत्थरों का ढेर लगा देते हैं। उपरान्त तीन दिन तक क़ब्र पर भोजन चढ़ाया जाता है।

चेन्चू बहुत से देवी देवताओं और प्रेतशक्तियों को मानते हैं। इनकी सबसे अधिक प्रभावशालिनी देवी 'गारेलमाईसामा' है। इनकी कृपा से आखेट और कन्दमूल की अच्छी प्राप्ति होती है। आखेट अभियान के पूर्व सफलता की कामना के लिए देवी का पूजन किया जाता है। यदि आखेट में सफलता मिलती है तो वह उसका कुछ अंश देवी की भेंट करता है। ऋतु के आम और इमली के प्रथम फल देवी को अर्पित किए जाते हैं। इन्हीं देवी की अनुकम्पा से महुआ में सुन्दर बहार आती है और फूल भली प्रकार झरते हैं। वर्ष में तय्यार की गई प्रथम महुआ की मदिरा भी देवी को भेंट की जाती है। मधुसंचयन में भी देवी को सदैव स्मरण किया जाता है। मधुछत्ते का एक अंश भी देवी को चढ़ाते हैं।

दूसरे कृपालु देवता 'भगवनतरु' हैं। यह वनों में सबकी रक्षा करते हैं। चेन्चू सदैव ही प्रकृति के मध्य विचरण किया करते हैं, अतएव देवता के आशीर्वाद को वे कभी विस्मृत नहीं कर सकते। 'पोटासामा' चेचक की प्रधान देवी हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कणिक्कर

कणिक्कर दक्षिणी ट्रावनकोर के अरक्षित वनों में बसे हुए हैं। सन् १९४१ ई० की जनगणना के अनुसार इनकी संख्या ७,५२७ है। जातिवर्ग के अनुसार ये अस्त्राल जाति वर्ग के हैं। वर्तमान युग में ये तामिल व मलयालम भाषा का मिश्रित रुप बोलते हैं।

कल्लार के चेम्बिकुन्नू आवासों, पलोद तथा चेरूकरा के नारानेल्ली तथा कुलाथुपुज़ा के विल्लिमला में कणिक्कर की बड़ी संख्या मिलती है। अन्य दूसरे स्थानों में ये पाँच से लेकर बारह परिवारों की संख्या में छिटके हुए मिलते हैं। कणिक्कर बहुधा झूम कृषि पर निर्भर रहते हैं पर अब कुछ स्थानों में जैसे पलोद, मादातुरा तथा कुलाथुपुज़ा में कुछ दिनों से हलकृषि अपना ली गई है। वे कन्द-मूल फल भी इकत्र करते हैं। वर्ष के कुछ भाग में उन्हें इन्ही पर जीवन निर्वाह के लिए निर्भर रहना पड़ता है।

ये चारो ओर से तामिल तथा मलयाली भाषाभाषियों से घिरे हुए हैं। इन पर मलयालियों का प्रभाव पूर्ण रूप से दृष्टिगत् है, केवल पलोद मादातुरा एवं कुलाथुपुज़ा के कणिक्कर औरों की अपेक्षा अधिक बदल गए हैं।

आज कणिक्कर केवल वंशानुक्रम में ही मात्रिक हैं। ये परंपराओं और विचारों में बड़े धनी हैं परन्तु इनकी भौतिक संस्कृति अत्यंत ही निर्धन है।

इनके सामाजिक व्यवस्था का स्वरूप बहिर्विवाही है। संपूर्ण जाति दो बहिर्विवाही समूहों में विभाजित है। प्रत्येक में अनेकों वंशवर्ग अर्थात् 'इलान्गल' मिलते हैं।

एक समूह के प्रत्येक वंश के सदस्य आपस में अपने को 'अन्नाथमबिमार'—अर्थात् भाई भाई मानते हैं। इनमें आपस में विवाह निषिद्ध होते हैं। अतः ये दूसरे समूह के वंशों में अपने साथी चुनते हैं। ये वंश 'मछमबिमार' अर्थात जिनमें विवाहयोग्य साथी प्राप्त किए जाँएं—कहलाते हैं।

एक समूह के किसी भी वंश में मृत्यु हो जाने पर उस समूह के सभी वंशों के सदस्य तीन से सात दिन तक शोक (पुलाई) मनाते हैं। मछमबिमार भी तीन दिन का शोक मनाते हैं। मृत्यु के तीसरे दिन (या सातवें दिन) अन्नाथम-बिमार एवं मछमबिमार दिवंगत के घर इकत्र होते हैं। यहाँ पर अशुच दूर करने के लिए नारियल के बीज (करनेल) का रस तथा करुनथोटली पेड़ की पत्तियाँ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूसरे बहिर्विवाही समूह के दो पुरुषों द्वारा आगत जनों के सिर पर छिड़की जाती हैं और सुपाड़ी खाने के लिए भेंट की जाती है।

ग्राम के प्रमुख को मुट्टुकानी कहते हैं। पूर्वकाल में प्रमुख की मृत्यु के उपरान्त उसका छोटा भाई प्रमुख पद का अधिकारी होता था। और इस प्रकार सबसे छोटे भाई के उपरान्त उस पद का अधिकारी सबसे बड़ी बहिन का पुत्र होता था। परन्तु अब प्रमुख का पुत्र भी पदाधिकार प्राप्त करता है। इसी प्रकार पूर्वजों की संपत्ति में केवल बहिन के बच्चों का अधिकार होता था। स्व-अर्जित संपत्ति भी अपने और बहिन के बच्चों में बराबर बाँट दी जाती थी। लेकिन अब बहिन के बच्चों का इस संपत्ति में कोई अधिकार नहीं होता। अब कणिक्कर मारुमकाथायाम के स्थान पर मक्काथायाम रीति का पालन करते हैं।

यहाँ पर बंधुत्व श्रेणीगत् अर्थात् वर्गात्मक है। ये 'अप्पन' शब्द का प्रयोग पिता के भाई और मां की बहिन के पति के लिए तथा 'अम्माचन' मां के भाई एवं पिता की बहिन के पति के लिए करते हैं।

पति और पत्नी के लिए प्रयुक्त शब्द 'कट्टिवन' और 'कट्टिवल' हैं। इन शब्दों से तात्पर्य भिन्न सामाजिक कर्मों से है। 'कट्ट' शब्द का अर्थ बांधना है। कणिक्कर तथा दक्षिण भारत की अन्य कुछ उच्च जातियों में रीति है कि पति अपनी पत्नी के गले में 'टाली' अर्थात् विवाहबंधन का मंगलसूत्र बाँधता है, अतएव उसे कट्टिवन अर्थात् बाँधने वाला कहते हैं। पलोद के कन्निक्कर में 'टाली' बाँधने की रीति नहीं। अतः वहाँ की भाषा में कट्टिवन और कट्टिवल शब्द नहीं मिलते।

बर्हिविवाही समूह में मृत भाई की विधवा पत्नी, मां के भाई की पुत्री, पिता की बहिन की पुत्री तथा पत्नी की बहिन विवाह के लिए सबसे उपयुक्त सहचरी समझी जाती है। प्रत्येक पुरुष के लिए आवश्यक है कि इनमें से किसी के साथ विवाह करे। किन्तु आजकल मामा फूफी के बच्चों के आपसी विवाह बहुत कम हो गए हैं।

परिवार का कर्त्ता धर्ता पिता होता है। उसे अपने अविवाहित बच्चों और परिवार की संपत्ति पर पूरा अधिकार होता है। परिवार में पति पत्नी दोनों ही एक साथ जंगल काटने और बीज बोने का कार्य करते हैं और एक साथ ही उपज उपभोग का आनन्द लेते हैं। जब बच्चे बड़े हो जाते हैं तो वे भी आर्थिक क्रियाकलापों में हाथ बटाते हैं। विवाह होने और पृथक आवासों में रहने पर भी पुत्र भोजनप्राप्ति के उद्यम में पिता की सहायता करता है। परिवार के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाहर मां के बड़े भाई 'काड़नवन' का विशेष स्थान होता है। उसकी इच्छा के विरुद्ध कभी कोई विवाह तय नहीं हो सकता।

इनके निवास पितृस्थानीय होते हैं। घरेलू शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि लड़का अपने पिता के पास १६ वर्ष तक रहे। बहुधा लड़के विवाह अथवा प्रथम शिशु के जन्मकाल तक अपने माता पिता के साथ रहते हैं। इसी समय में वह भूमि का अधिकारी हो जाता है और अपनी भूमि पर अलग खेती करता है। कृषिफल का समय समीप आने पर वह अपने लिए पृथक कुटीर का निर्माण करता है और वहाँ पत्नी के साथ रहने चला जाता है।

कणिक्कर की एक अत्यंत ही रोचक रीति सासुपरिहार (Mother-in-law avoidance) की है। यहाँ सासु और जमाई दोनों एक दूसरे से दूर रहते हैं। सास तो अपने जमाता का नाम ले भी लेती है किन्तु जमाता सास का नाम नहीं ले सकता। और न वे कभी एक दूसरे का स्पर्श कर सकते हैं।

प्रत्येक बर्हिविवाही वर्ग की सबसे छोटी सामाजिक आर्थिक एकाई प्रारंभिक परिवार है। इसमें पति पत्नी और उसके बच्चे सम्मिलित रहते हैं। परिवार में अविवाहित जन अलग रहते हैं। माता पिता दस वर्ष से कम आयु वाले बच्चों के साथ कुटीर के एक भाग में सोते हैं। किशोरावस्था को प्राप्त अविवाहित पुत्रियाँ बहुधा दस वर्ष से कम आयु वाले बच्चों के साथ कुटीर के दूसरे खण्ड में सोती हैं। इस स्थान को चैपू कहते हैं। इसे प्रमुख कुटीर के समीप इसी लिए बनाते हैं। पहिले १० वर्ष से २० वर्ष की आयु के लड़के एक अलग कुटीर में जो ग्रामप्रमुख की कुटीर के पास बनाई जाती थी—रात्रि व्यतीत करते थे।

बच्चों का पालन पोषण यहाँ बड़े प्यार और ममत्व से किया जाता है। लड़के-लड़की दोनों की समान रूप में देखभाल की जाती है। उनकी धारणा है कि प्रेम के प्रतिफल इन बच्चों को सदैव प्यार से ही पालना चाहिए। उन्हें सदैव ही बच्चों की चाहना रहती है। उनका कथन है कि यदि सर्प भी जन्म ले तो उसका पालन प्यार से करना चाहिए। लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं कि उनकी किसी प्रकार से भर्त्सना न की जाती हो।

खेती के अतिरिक्त कणिक्कर वनों की नाना उपज का भी संकलन करते हैं। यहाँ विभिन्न प्रकार के वन्य मूल, फल फूल और पशु पाये जाते हैं। इनमें से चनम, नेदुवान, नूरान, चेरुकिज़ानगू, करला तथा परान्द मूलें वर्ष के कुछ दिनों इनके जीवन का आहार रहती हैं।

यहाँ कटहल (चाका), नारियल (तान्गा), आम (मान्गा), काजू (परान-गिआन्दी), अमरूद (परका) आदि फलों की खेती होती है एवं जंगली जानवर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

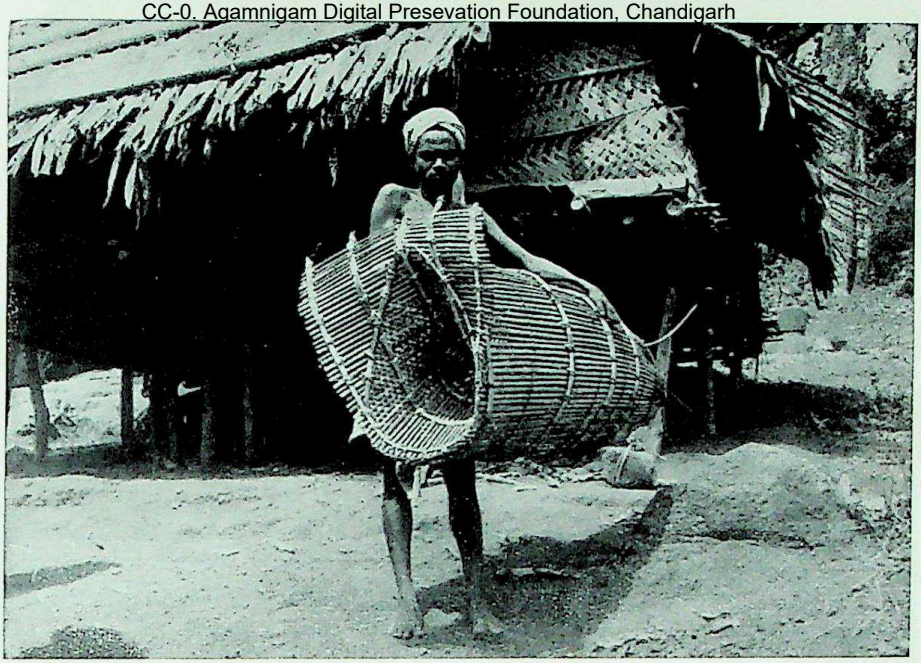

कणिक्करों का मछली पकड़ने का जाल।

केरल प्रदेश, ट्रावनकोर

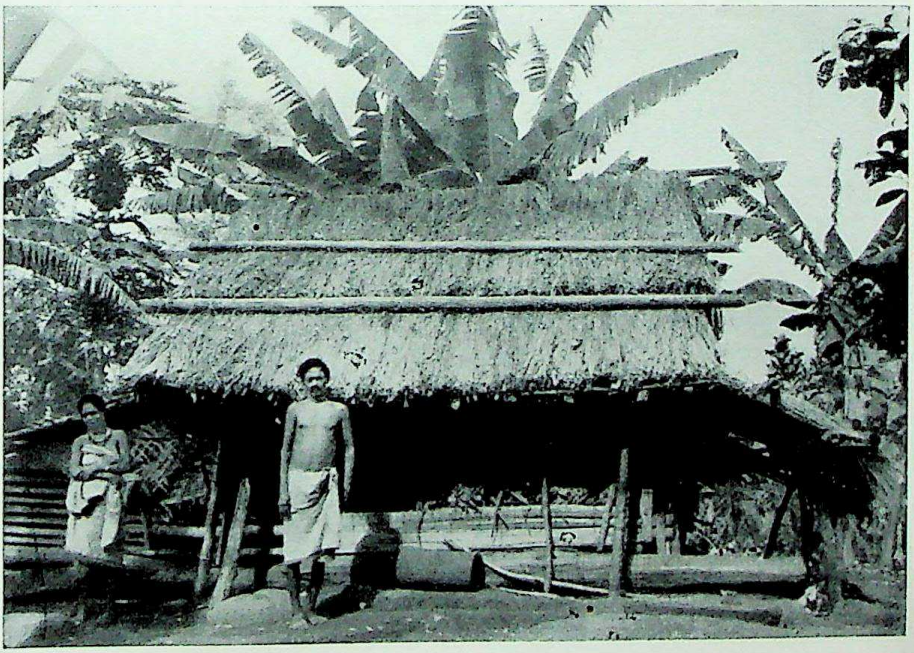

कणिक्कर के निवास कुटीर।

केरल ट्रावनकोर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जैसे चूहे (एली), गिलहरी (मलपान्नान), बन्दर (कुरांगू), जंगली सुअर (पन्नी) तथा नाना वनपक्षियों (कट्टूकोशी) का भोजन के लिए आखेट किया जाता है।

जंगली कन्दमूल यद्यपि कणिक्कर का प्रमुख आहार नहीं तथापि अधिकांश लोग २-३ माह तक तथा कुछ पूरे वर्ष तक इन पर जीवन निर्वाह करते हैं। टपिओका की खेती आरंभ होने के पूर्व कणिक्कर प्रायः अपने आवास के आसपास की पैदावार पर ही निर्भर रहते थे।

यहाँ मृत्यु को 'चावु' और मृत को 'चावु' या 'चावनमार' कहते हैं। इनका विश्वास है कि मृत्यु वृद्धावस्था और जीवनक्षय का अवश्यंभावी परिणाम है। अतएव जब किसी युवा या बच्चे की मृत्यु हो जाती है तो ये उसे प्रेतात्माओं का कुप्रभाव समझते हैं।

यहाँ पच्चीस वर्ष से ऊपर आयु वालों का (स्त्री-पुरुष दोनों ही) दाह-संस्कार करते हैं—शेष शव समाधिस्थ कर दिए जाते हैं। हैज़ा, चेचक इत्यादि महामारियों से मरने वाले एवं गर्भवती स्त्रियों को भी ये समाधिस्थ करते हैं।

इनके पूजन का प्रमुख देवता 'सास्ता' है जिसे ये अप्पन या अयप्पन कहते हैं। इसके अतिरिक्त अनेकों अन्य देवी देवताओं व अलौकिक शक्तियों की भी ये धार्मिक विधि-विधानों एवं तंत्रमंत्र द्वारा अभ्यर्थना करते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उराली

उराली अत्यंत ही छोटे कद, लम्बे शीर्ष, मध्यम प्रलम्ब मुख, और मध्यम नासिका वाले होते हैं। सन् १९२१ तथा १९३१ ई० की जनगणना के अनुसार उनकी संख्या क्रमशः २३० (१२९ पुरुष, १०१ स्त्रियाँ) व ९१६ (४५४ पुरुष, ४६२ स्त्रियाँ) थी। ये उत्तरी ट्रावनकोर के मुवातपुज़ा और कोट्टयाम प्रदेश की थोड़ूपूज़ा, कुमिली, गेम, नेरीआमंगलम पर्वतश्रेणियों पर बिखरे हुए हैं।

अतीत काल में उराली एक आवास से दूसरे आवास में प्रयाण किया करते थे। उनका निम्न प्रदेश के निवासियों के साथ बहुत कम संपर्क रहा है। इसी भूभाग में बसी हुई माला आरयान, मन्नान, पालियान इत्यादि आदिम जातियों के साथ तो उनका संपर्क लेशमात्र भी नहीं रहा। अधिकांश स्थानों में ये वृक्षों पर घर (एड़मदम) बना कर रहते हैं। इनकी घर में प्रयोग की वस्तुओं में विशेष खाना बनाने के मिट्टी के कुछ बर्तन, लोहे के औज़ार और चटाई इत्यादि हैं। वर्ष के अधिकांश समय ये जड़ मूल खाते हैं—यद्यपि यहाँ झूम कृषि की प्रणाली से पहाड़ी धान की खेती की जाती है। आज कल टपिओका इनके भोजन का प्रमुख खाद्य है। ये विदेशियों के चाय बगानों में कभी श्रमिकों का कार्य नहीं करते। इन्हें श्रमकार्य करने के लिए बहुत कुछ समझाया गया पर अभी तक इन्होंने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। ये अपने धार्मिक विचारों और इन्द्रजालीय कुशलता के कारण अपने को मन्नान, पालियान, आदि आदिम जातियों से श्रेष्ठ समझते हैं। उनके साथ ये खान पान नहीं रखते। इनकी स्त्रियों के प्रति चाय बगान के बाबुओं के दुराचारों ने इन्हें किसी नवीन सहर्ज किन्तु अनिश्चित उपक्रम करने की अपेक्षा कठिन और पुरातन जीवन यापन करने के लिए बाध्य किया है।

उराली जाति के विभिन्न 'कूट्टकार' अर्थात् वंशजों में आपस में बड़ी घनिष्ठता रहती है। आवश्यकता पड़ने पर वे एक दूसरे को भौतिक सहायता प्रदान करते हैं और किसी एक की मृत्यु पर सभी वंशज शोक मनाते हैं। यहाँ 'कुटुम्बम्' अर्थात् जैविक परिवार से तात्पर्य माता पिता और उनके अविवाहित बच्चों से होता है। यही इनकी प्रमुख सामाजिक आर्थिक एकाई है। यहाँ आज भी प्राचीन युग की वंश अर्थात् कुटुम्ब-व्यवस्था चल रही है—हाँ, उसमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गए हैं। उरालियों में विवाह अधिकतर विनिमय के आधार पर होते हैं। विनिमय विशेष कर दोनों ही पक्ष में वर की बहिनों का होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उराली वृक्ष कुटीर।

केरल ट्रावनकोर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मद्रास का एक उराली अपनी गुलेल धन्वा के साथ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार का विनिमय कोई नियम नहीं—ऐच्छिक होता है। बंधुत्व प्रणाली यहाँ विश्लेषिक आधार पर है और विवाह के द्वारा उसकी व्यवस्था होती है और यही समाज में व्यक्ति का स्थान और व्यवहार निर्धारित करती है। इनकी बंधुत्व प्रणाली और इन्द्रजाल के प्रति इनका गहन विश्वास इनके सांस्कृतिक जीवन के ताने बाने बुनते हैं। ये अपने पिता, उनके भाइयों तथा मां की बहिन के पति के लिए 'अप्पन' शब्द का प्रयोग करते हैं।

पुराने समय में इनके समाज में विवाह के लिए सबसे योग्य साथी मामा-फूफी की संतान समझे जाते थे। इन्हें 'मूरापेनु' कहते हैं। इनके लिए और किसी दूसरे संबंध की बात सोची ही नहीं जा सकती। इन्हें पिता के भाई के बच्चों अथवा मां की बहिन के बच्चों से भिन्न समझा जाता है।

दक्षिण की अन्य आदिम जातियों की भाँति ही उराली उत्तराधिकार की दृष्टि से मात्रिक हैं। मां का बड़ा भाई जिसे 'काड़ानवन' कहते हैं परिवार का स्वामी समझा जाता है। घर का स्वामी होने के नाते ही वह बहिन के बच्चों का अभिभावक हो जाता है। आज कल मामा-फूफी की संतान के आपसी विवाह कुछ कम होते जा रहे हैं। यद्यपि समाज में-मारुमक्काथयाम रीति में परिवर्तन होने और विवाह में विनिमय विवाह की प्रधानता होने के कारण 'कड़ानवन' की प्रतिष्ठा कुछ कम हो गई है तथापि अपनी बहिन के पुत्रों के लिए पुत्रवधू खोजने का दायित्व उन्हीं का होता है। उरालियों में विवाह का अनुष्ठान अत्यंत ही साधारण होता है। इसमें वर व वधू के संबंधियों को 'काँजी' अर्थात चावल की मदिरा का पान कराया जाता है। यहाँ वधू के माता-पिता को वधूशुल्क नहीं चुकाया जाता और न वर को वधू की मां को कपड़े या पैसे देना आवश्यक होता है।

यहाँ बहुविवाह का प्रचार है। किन्तु किसी व्यक्ति की तीन से अधिक पत्नियाँ नहीं होती। हाँ, जिसकी विनिमय के लिए अनेक बहिने होती हैं—वही बहुविवाह करता है।

यदि उराली विनिमय-विवाह पद्धति का कठोरता से पालन करते और कभी ऋण अथवा दान के लिए विवाह न करते तो आज कितने ही वयस्क क्वाँरे रह जाते और समाज में संकट की स्थिति आ जाती। आज कितने ही अविवाहितों के मन में इस प्रणाली को तोड़कर समाज के इस अन्याय को दूर कर दूसरी जाति में विवाह करने की बलवती भावना जाग गई है। आज के परिवार में प्रमुख कर्ता-धर्ता पिता होता है। वही अपने बच्चों का पालन करने और उनके लिए भोजन जुटाने के लिए उत्तरदायी रहता है। पिता द्वारा जुटाई गई संपदा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधिकारी पुत्र होते हैं—जो इसके प्रतिस्वरूप आगे चल कर अपने वृद्ध माता पिता की देख भाल करते हैं। घर में पिता का प्रभुत्व सर्वोपरि रहता है। परिवार का कोई भी सदस्य उसे बिना बताए कुछ भी नहीं कर सकता। विवाह के उपरान्त पिता से अलग रहने पर भी पुत्र अपने पिता की आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं कर सकते।

दक्षिण की पर्वत मालाओं और गहन वनखण्डों के मध्य उरालियों की अपनी सांस्कृतिक गोह (स्थली) है जिसे ये अलौकिक के प्रति अपने गहन विश्वास के आधार पर स्थायी रख सके हैं। इनके लिए ये दैवी शक्तियाँ उदार एवं संहारक दोनों ही प्रकार की होती हैं। इनके विचार से नित्य प्रति पूर्व से निकलने वाला सूर्य समस्त जग का स्वामी एवं स्रष्टा होता है। वही खेतों की उपज का कारक है एवं उसी की कृपा से मनुष्य असीम धन-धान्य प्राप्त करता है। प्रत्येक धार्मिक अवसर पर 'सास्ता' देव की अभ्यर्थना की जाती है—चाहे वह केवल व्याधियों का निदान करने के इन्द्रजाल अथवा चमत्कार के ही अवसर क्यों न हों। 'कलन' मृत्यु का देवता है। वह सभी विरोधी शक्तियों का नेता माना जाता है।

उरालियों का विश्वास है कि व्याधियों को जन्म देने वाली शक्तियाँ वहाँ आरंभ से ही रहती हैं अर्थात् उनका जन्म मनुष्य के साथ ही हुआ था। वे अमर हैं और कोई भी किसी प्रकार से उनका अमंगल नहीं कर सकता।

वे अपने मृतकों को समाधिस्थ करते हैं और उससे संबंधित, अभिलषित एवं प्रयोग की सभी वस्तुएँ समाधि में रख देते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh